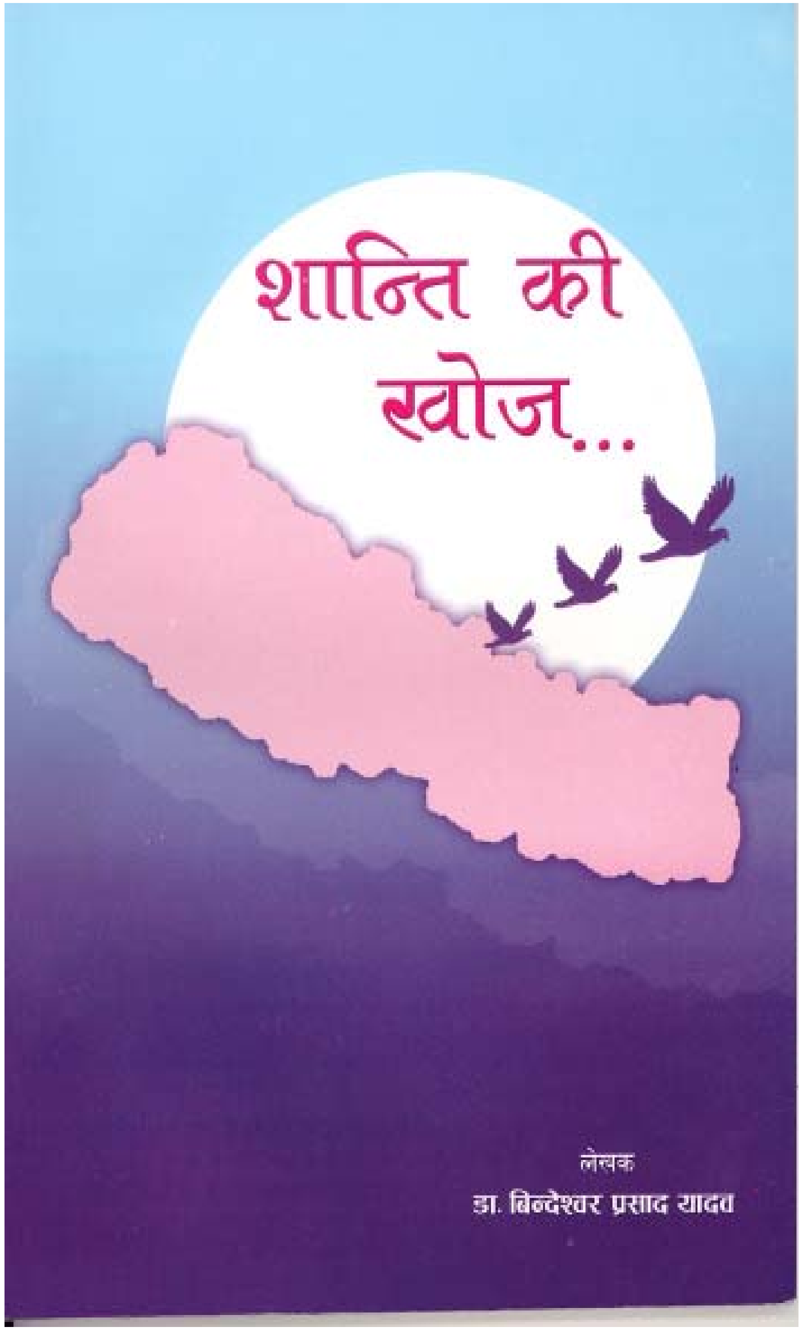
शान्ति की
खोज...
लेखक
डा. बिन्देश्वर प्रसाद यादव

शान्ति की खोज

लेखक

डा. बिन्देश्वर प्रसाद यादव

मधेश शान्ति विश्वविद्यालय

(शान्ति र विकासकालागि मधेश प्रतिष्ठानद्वारा स्थापित)

शान्ति की खोज

लेखक	:	डा. बिन्देश्वर प्रसाद यादव
सर्वाधिकार ©	:	लेखकमा
प्रकाशन ⁄ संस्करण	:	वि.सं.२०६३ ⁄ प्रथम
प्रकाशित प्रति	:	१००० प्रति
प्रकाशक	:	मधेश शान्ति विश्वविद्यालय, गौर, नेपाल
ISBN:	:	978-99946-2-978-7
मूल्य	:	रु.३५ मात्र

Shanti Ki Khoj
by Dr. Bindeshwar Prasad Yadav
Madhesh Peace Univerisity,
(Established by Foundation for Peace and Development)
website : www.madhesh.org.np

समर्पित

मानवअधिकार तथा सत्य न्याय पे आधारित
सत्ता सहभागिता हेतु लड़नेवाले
विश्व के बहादुरो को -

प्रस्तावना

अपनी मेडिकल शिक्षा समाप्त करने के पश्चात् नौकरी के दौरान पहली पोस्टींग सन् १९८४ (२०४१ वि.सं.) में मुझे गोरखा जाना पडा । यहाँ प्रकृति की सुन्दरता, मौसम की बहार - न अधिक गर्मी, न अधिक सर्दी, लोगों की सरलता और सहजता मेरे मन पर अमिट छाप छोड़ गयी । जब कभी काठमाडौं उपत्यका आते - देर रात जाने तक न्यूरोड, रत्नपार्क, या अन्य स्थान पर अकेले आने जाने में किसी तरह का भय अनुभव न होता । नौकरी के दौरान बीती विसवी शताब्दी के अंतिम वर्षो में सल्यान और जुम्ला गया । वहाँ बेवजह हिंसा की घटनाएँ सुनने को मिलती तथा अपनी सुरक्षा पर ध्यान देने के लिए पुलिस-प्रशासन एवं अन्य मित्रगणो द्वारा परामर्श प्राप्त होते । देर रात तक बाहर रहना सुरक्षा के दृष्टिकोण से अच्छा नहीं माना जाता ।

बढÞते समय के साथ जगह-जगह पर निर्दोष लोगों की हत्या होने लगी । देश भय, इर्ष्या और हिंसा के चपेट में चला गया । नेपाल बाल सैनिक के देश के रुपमे जाना जाने लगा । देश के नागरिक देश में वर्तमान अन्यायिक सत्ता को बदलने के लिए गोलबंद हो गए जो माओवादी समूह के रुप में जाने जाने लगे । उनका विश्वास रहा “हिंसा से सत्ता परिवर्त्तन” । भय का आतंक ऐसा रहा कि चाहते हुए भी कोई व्यक्ति सत्ता परिवर्त्तन के लिए अहिंसा का मार्ग, सत्याग्रह का रास्ता अपनाने की सलाह न दे सका । ईस्वी सम्बत २००६ (वि.सं. २०६३) में सत्ता परिवर्त्तन हुआ । लेकिन लोगों के मन में हिंसा, भय और ईर्ष्या की भावना में कोई परिवर्त्तन न हो सका । इसी बीच नेपाल की आधी आबादी वाला मधेशी समुदाय, अपने मानवीय अधिकारों के लिए संघर्ष जारी कर दिया । भय, ईर्ष्या और हिंसा की घटनाओं से युवा मस्तिष्क को हिंसा से अहिंसा की ओर, ईर्ष्या से सहयोग की ओर, नफरत से प्रेम की ओर मोड़ने के लिए मेरा एक नन्हा सा प्रयास है - ‘शांति की खोज’ इसमें महात्मा गांधी के अहिंसात्मक आन्दोलन और सत्याग्रह की चर्चा है जिसके जरिये दक्षिण अफ्रीका में भारतीयमूल के लोगो को अधिकार मिले

तथा भारत अंग्रेजी साम्राज्य से स्वतंत्र हो गया । "अहिंसा प्रेम और शान्ति के लिए सच्चा और अचूक पथ है" - गांधीजी का अटूट विश्वास था । वे कहते थे - "मानवजाति अहिंसा के द्वारा ही हिंसा से मुक्ति पा सकती है ।"

उनका पवित्र संदेश था - घृणा पर प्रेम से ही विजय प्राप्त की जा सकती है, आगे कहते - पहले हृदय और हाथ (भावना/विचार और कर्म) को शुद्ध/पवित्र बनाओ, फिर न्याय सारी दुनिया से मांगो । उनके बताए अहिंसा, प्रेम और सत्याग्रह के रास्ते पर चलकर बहुत से देश स्वतंत्र हो गए । तो क्या नेपाल में सत्ता परिवर्त्तन, और मानवीय अधिकारों की प्राप्ति अहिंसात्मक आन्दोलन और आपसी प्रेम-सद्भाव से नहीं आ सकती ! अवश्य आ सकती है । सिर्फ आवश्यक्ता है - अपने आत्मबल और अहिंसात्मक प्रेम को दृढविश्वास से जोड़ने की । हमे विश्वास है कि यह नन्हा उपहार युवाओं के मस्तिष्क में अहिंसा और प्रेम द्वारा अधिकार प्राप्ति के दृढ विचारों को सफलतापूर्वक भरेगा ।

अन्त मे इस पुस्तक के तयारी के क्रम मे सहयोग करनेवाले प्रा.डा. विश्वनाथ अग्रवाल, प्रा.डा. विमल नारायण प्रसाद गुप्ता, डा. रामदेव सिंह, प्रा.डा. राम प्रसाद चौधरी, श्री गोपाल ठाकुर, श्री विक्रम मणि त्रिपाठी, श्री धर्मेन्द्र झा, श्री राम नारायण देव लगायत अन्य सभी महानुभाव लोगो को इस अवसरपर धन्यवाद देना चाहता हूँ ।

डा. बिन्देश्वर प्रसाद यादव
रामनवमी १३ चैत्र २०६३
(२७ मार्च, २००७)
काठमाडौं ।
ईमेलः bpyadav66@hotmail.com

विषयसूची

क.सं.	विषय	पेज नं.
१.	परिचय	१
२.	शान्ति की खोज	३
३.	हिंसा-आतंक का देश नेपाल	६
४.	नेपाल आतंक का जन्मदाता कौन ?	८
५.	परिवर्तन पथ	१३
६.	अहिंसात्मक सत्याग्रह नेपाल के सन्दर्भ में	१६
७.	अहिंसात्मक सत्याग्रह नेपाल मे क्यों ?	२५
८.	देश की मूलधार की चाहत में मधेशी	२७
९.	रुस ट्रांसवाल और नेपाल	३६
१०.	अर्थ और विज्ञान युग में मानवतावाद	४०
११.	अहिंसक शक्ति	४५
१२.	गांधीजी के कुछ सम्बोधन	५२
१३.	जनता और राष्ट्र की सेवा	५६
१४.	शोषितों के नाम	५९
१५.	निर्भय हो जाओ	६१

परिचय

दो दशक पूर्व विश्व का एक अति शान्ति प्रिय देश था नेपाल । पर्यटक, विश्व के सभी कोने से सालों भर आते रहते । यहाँ के लोग अपनी सच्चाई और सरलता के लिए सम्मानित होते । राजा को राज्य का एक बड़ा जनसमूह भगवान का दर्जा देता । नेपाल अपनी शान्ति के लिए अपने पड़ोसी देशों के जनसमुदाय बीच भी अत्यन्त ही लोकप्रिय था ।

आज घृणा और हिंसा का साम्राज्य सारे देश में व्याप्त है । मानव मन से प्रेम और अहिंसा लगभग बिदा हो चुका है । सत्य और न्याय से हमारे सत्ताधारी बहुत दूर जा चुके हैं । सत्ता संचालन की बेईमानी, बुद्धि का ऋणात्मक दिशा में तर्क, स्वार्थ परायणता और सत्ता लोलुपता देश को विध्वन्स और विखण्डन के कगार पर खड़ा कर दी है । रौतहट (गौर) में दो गुटों के बीच की झड़प मे हुयी हिंसा (२९ लोगों की मौत, अनेको घायल) इस बातका प्रमाण है कि हिंसा हमारे मन में किस तरह से भरी हुयी है । यहाँ सीधा और सटीक सवाल उठता है कि हमारे जीवन का क्या उद्देश्य है ? क्या हम अपने मतभेदों को बातचीत के जरिए सुलझा नहीं सकते ? लगता है आज हिंसा ही हमारी सभी समस्याओं के समाधान के लिए अस्त्र है । जिन लोगों के साथ कुछ वर्ष पहले तक हमारे मित्रवत संवन्ध रहते थे आज घृणा और नफरत में बदल गए हैं । किस तरह का मानसिक परिवर्त्तन हो गया है हमारा । लगता है जैसे हम संवेदनहीन और आत्मविहिन हो चुके हैं । अदृश्य आत्मा से हमारा संबंध विच्छेद हो चुका है ।

राजमहल में राज परिवार का हत्या द्वारा समूल नष्ट, तेरह हजार से अधिक लोगों की माओवादी गृह युद्ध में हत्या, मधेशी मानव अधिकार संबंधी संघर्ष, जनजाति, दलित, महिला समेत अन्य समूह की आवाज, सम्बैधानिक राजतंत्र या सम्पूर्ण गणतंत्र की माँग - क्या संकेत करती है ! क्या संदेश देती है !

महात्मा गांधी - सत्य, अहिंसा और प्रेम की प्रतिमूर्ति थे और दुनिया

उन्हें भगवान बुद्ध के बाद दूसरा स्वप्रकाशित (enlighted) व्यक्ति मानती है । त्रिभुवन विश्वविद्यालय, काठमाण्डौ के कैम्पस में स्थित गाँधी भवन के साथ विद्यार्थियो द्वारा किया गया दुर्व्यवहार - क्या सत्य, अहिंसा और प्रेम के साथ दुर्व्यवहार नहीं है ?

किस तरह हमारे मानवीय मूल्यों का ह्रास हो गया है । कैसा संकुचन हमारे आध्यात्मिक गुणों का हो गया है ।

क्या हम कभी अकेले या समूह में इन विषयों पर शांतचित होकर विचार करते हैं ? क्या हम आत्म विश्लेषण की आवश्यक्ता महसूस करते हैं ?

हमारी नियति क्या है ?

क्या है - नियति नेपाल की ?

शांति की खोज

शांति हम सब चाहते हैं। शांति की कामना करते हैं। रैलियाँ निकालते हैं। दीप जलाते हैं। सभाऐ आयोजित की जाती हैं । प्रार्थना सभा भी होती हैं। देव स्थलों में देव पूजन भी होते हैं। हम भी शांति चाहते है। इस कामना से रैलियो में भाग लिया, दीप जलाए, प्रार्थनाएँ की, मंदिरो में देव पूजन किए। ऐसे तो लाखो ने किए। फिर भी शांति को देश से दूर भागते ही पाया। अपनी पूजा-प्रार्थना को असफल देख आत्मा में बैठे परमात्मा से पूछना शुरु किया, देव स्थलों में देवों से पूछना शुरु किया। अपने अन्दर आत्मा में झाँककर देखने का प्रयास किया। और पाया - लगता है जैसे अन्दर का ईश्वर कहता हो, देव-स्थल के देव-देवी कहते है -"सिर्फ कामना, प्रार्थना, अर्चना से शांति नहीं आती क्योंकि आतंक और अशांति फैलानेवाले भी अपने आतंक की सिद्धि हेतु कामना करते हैं, अपने तरिके से वे भी प्रार्थना, अर्चना जैसे शक्तियों का आव्हान करते हैं। शांति, सत्य और न्याय सहोदर भाई बहन है। जहाँ सत्य और न्याय रहते हैं वही शांति रहती हैं। यदि शांति चाहते हो तो देश की विधि व्यवस्था में सत्य और न्याय को पहले स्थापित करना होगा। नेता, उच्च अधिकारी, अन्य कर्मचारी, समाज के अन्य बडे लोगो को सामान्य जनता के साथ, राष्ट्र और समाज के साथ सत्य और न्यायपूर्ण कर्म-व्यवहार करने होंगे। सत्य और न्याय को देश में स्थापित करो, शांति तो स्वतः आयेगी।

जब अपने अन्दर अन्तरआत्मा में झाँकता हूँ तो पाता हूँ शांति के लिए सिर्फ कामना करता हूँ कर्म नहीं। बाहर देखता हूँ तब समाचार पत्र तथा अन्य मिडिया इसका प्रमाण देते हैं कि यहाँ तो सिर्फ शांति की कामना हो रही है, शांति हेतु कर्म नहीं। क्योंकि इस हाल में भी देश में

हो रहे भ्रष्टाचार, असत्य और अन्याय का ही बोलबाला है। फिर यह शांति की कामना कैसी ?

प्रार्थना-अर्चना तभी सफल होती है जब वह सत्य कर्म से जुडे। सत्य कर्म के वेगैर तो प्रार्थना सिर्फ एक छलावा है।

यह एक पुरानी कहावत है "God helps only those who help themselves" अर्थात ईश्वर उन्ही की मदद करता है जो अपनी मदद स्वयं करते हैं।

इस आध्यात्मिक आधार से विश्लेषण करने पर सहसा मन मेंकुछ प्रश्न उठते है-

१. क्या हम हृदय से शांति चाहते है ?
२. यदि हम चाहते हैं तो इसके लिए क्या प्रयास करते है, जिससे ईश्वर हमारी मदद करे ?

क्या यह सत्य नही है कि हम आग से आग बुझाने का प्रयास कर रहे हैं। बन्दूक का जबाब बन्दूक से दे रहे हैं। आतंक का आतंक से जबाब हो रहा हैं। परिणामः देश/देशबासी दुहरे आतंक को झेलने के लिए बाध्य हो रहे हैं।

नेपाल का भाग्य अधर में दोलायमान हो रहा हैं। नेपाल अपने लिए क्या करना चाहता है। नेतागण, राजनितिक पार्टीयाँ, बुद्धिमान सुयोग्य नेपाली, और नेपाली जनता नेपाल के लिए क्या करती है। दुनिया देखना चाहती है।

एक क्षण के लिए यदि हम मानव जाति के प्रारम्भ के दिनों को कल्पना की आँखो से देखे जैसा कि इतिहास भी बताता है - जब वे जंगलो में रहते थे। न तो कोई देश की सीमा थी, न कोई शासक था, न कोई देश शासित। न कोई धर्म था, न कोई वर्ग भेद। जैसे-जैसे मानव जीवन विकसित होता गया, समाज बने, देश बने, धर्म आए, वर्ग भेद बने। सबके पीछे एक मुख्य उद्देश्य था मानव जीवन को सुखमय, शांतिमय बनाना और साथ-साथ मनुष्य जीवन के आध्यात्मिक लक्ष्यों को प्राप्त करना। ऐसी ही शिक्षा प्रत्येक धर्म ने जीवन और जीवन कें

आध्यात्मिक उद्द्देश्य के संबंन्ध में दी है । फिर समय काल के साथ देश की सीमाएं बढÞती-घटती गयी । नए नए देश बने । छोटे छोटे देश मिलकर बडा देश बने । देश टुट नया देश बना । गोरखाली राजाओं ने लगभग २३८ वर्ष पूर्व छोटे छोटे राज्यों को मिलाकर नेपाल का निर्माण किया, जिसका भू-भाग वर्तमान नेपाल से बडÞा था । भारत में अंग्रेजी शासनकाल के दौरान दक्षिण नेपाल का बहुत बडÞा तराई का भू-भाग भारत में समाहित हो गया ।

इस प्रकार दुनिया के बहुत राजाओं में भी परिवर्तन देखा गया । सम्राट अशोक, जिनकी कृति अशोक स्तम्भ, जो दुनिया को शांति का उपदेश दे रही है, नेपाल की भूमि पर भी वर्तमान है । कलिंग (वर्तमान भारत का उडÞीसा राज्य) युद्ध में मानव रक्त की नदी बही । सम्राट अशोक विजेता हुआ । उनके राज्य की सीमा बढÞ गयी । वह बडÞी क्रूर निर्दयी राजाओं की श्रेणी में गिना जाता था । इस विशाल नर संहार से उसका हृदय परिवर्तन हो गया । एक महान सम्राट महासेनाओ के अधिकारी से एक बौद्ध भिक्षु बन गया । शासन करने के बजाय जीवन में अध्यात्मिक संदेशो का संचारकर्ता बन गया । जिससे एक क्रूर निर्दयी मानव इतिहास में मानवता के प्राण के रुप में अमर हो गया । शांति का संदेश निम्न पंक्तियों से निकलती लगती हैं ।

बुद्धम् शरणम् गच्छामि ।
धर्मम् शरणम् गच्छामि ।
संघम् शरणम् गच्छामि ।

गांधी कभी शासक बनने की चाह नहीं रखे । भारत में ऐतिहासिक परिवर्तन लानेवाले जय प्रकाश नारायण कभी कोई पद नहीं लिए । दक्षिण अफ्रीका के अश्वेत नेता नेल्सन मण्डेला दशकों जेल यातनाएँ विताने के बावजुद भी सिर्फ एक अवधि के लिए ही राष्ट्रपति पद पर रहे । सुनते हैं गणेशमान जी को भी प्रधानमंत्री बनने का आमंत्रण आया था, फिर भी वे प्रधानमंत्री पद को प्राप्त करने के बजाय विना पद के रहना श्रेयस्कर समझे । क्या त्याग का विचार गणेशमान जी के साथ ही नेपाल से चला गया ?

हिंसा आतंक का देश नेपाल

हिमालय की गोद में बसा नेपाल कुछ वर्ष पूर्व तक विश्व में शान्ति भू-खण्ड के रूप में जाना पहचाना जाता था । सन् १९९० तक विश्व में शान्ति क्षेत्र के रूप में मान्यता प्राप्ति हेतु ११३ देशों का समर्थन प्राप्त किया था । परन्तु आज स्थिति बिलकुल विपरीत हैं । नेपाल की धरती नेपाली द्वारा नेपाली के रक्त से रंजित हो रही है । शान्ति की जगह असुरक्षा से सब भयभीत हैं : कितने अनाथ, कितनी विधवाएँ ... ! देश विकास हेतु जिन हाथों में आज किताबें कलम और कापियाँ शोभती, उन्ही हाथों में आज राइफल, पिस्तौल और बम हैं । जो विचार दूसरों को जीवन देकर अपना जीवन सराहते, वही दूसरों को मौत देकर अपनी सफलता मान बैठे हैं । संयुक्त राष्ट्र संघ के अध्ययन के आधार पर नेपाल उन देशों की सूची में आ गया हैं जहाँ बाल सैनिक हिंसात्मक संघर्ष में जुटे थे । साथ ही, माओवादी नेताओं का कहना था कि अट्ठारह (१८) वर्ष से कम उम्र वालोंको, वे माओवादी सैनिक दस्ता में शामिल नहीं करते । क्या यह सत्य नहीं है कि आज नेपाल में विषमताएँ और अन्याय बडे पैमाने पर विद्यमान है और सामान्य जन जीवन इनसें बुरी तरह प्रभावित हैं । मधेशी समस्या, जो एक विकराल रुप धारण किए हुए हैं क्या इन विषमताओं और अन्याय की देन नहीं हैं ? और अनेक बडÞी समस्यायें आने को तैयार हैं । हिंसा और आतंक की श्रृखला चल रही हैं, और आनेवाली समस्याएँ इसमें वृद्धि करने को तैयार हैं ।

एक ओर विकास हेतु अनेको योजनाएँ चल रहीं हैं, अरबों की राशि खर्च हो रही हैं, तो दूसरी ओर आतंक और असुरक्षा भी तेज गति से बढ़ती जा रही हैं । इस विध्वंस तथा विकास के खेल में, विध्वंस आगे निकलता जा रहा हैं, विकास पीछे छुटता जा रहा है ।

न्याय सत्य का दुसरा रुप हैं तो अन्याय असत्य का। अहिंसा शान्ति का प्रवर्द्धन करती है तो हिंसा अशान्ति और आतंक का। नेपाल के मधेश की धरती पर जन्में राजकुमार सिद्धार्थ, राज्य का परित्याग किए, और बुद्धत्व प्राप्त कर, महात्मा बुद्ध के नाम से अहिंसा और शान्ति का संदेश विश्व के कोने कोने में पहुँचाए। उन्होंने एक राज्य छोड़ा, परन्तु उनकी शिक्षा आज भी लगभग आधी दुनिया पर अधिकार की हुयी है। ऋषियों, संतो नें मानव जीवन का उद्देश्य भौतिक उन्नति और अधिकार की बढ़ोत्तरी से भी ज्यादे महत्वपूर्ण आत्म उन्नति को बताया हैं।

दुनिया में राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक परिवर्तन हिंसा और अहिंसा, दोनो ही रास्ते से हुए हैं। नेपाल ने क्यों परिवर्तन हेतु हिंसा का मार्ग अपनाया है ? क्या यहाँ परिवर्तन अहिंसा के रास्ते सम्भव नहीं है ? ये सब के सब राजनीतिक परिवर्तन हेतु हो रहे हैं। क्या नेपाल में राजनीतिक परिवर्तन अहिंसा और सत्याग्रह के रास्ते सम्भव नहीं है।

नेपाल आतंक का जन्मदाता कौन ?

पुरानी कहावत है - “बाँस से बाँस पनपता है, घास नही।” इसी प्रकार प्रेम से प्रेम पनपता है, नफरत नहीं। न्याय से न्याय पनपता है, अन्याय नहीं। ठीक ऐसी ही एक अन्याय दूसरे अन्याय को जन्म देता है, न्याय का नहीं। शांति से शांति आती है, और अशांति से अशांति। क्या इसी तरह से एक आतंक का जन्मदाता कोई अन्य आतंक होता है ?

वर्तमान समय तथा एक दो वर्ष पहले के समय की तुलना करें तो दो स्थितियाँ देखने को मिलती है। पहले माओवादी युद्ध माओवादी शक्ति तथा राष्ट्र की सुरक्षा शक्ति के साथ होता देखा गया। लेकिन द्विपक्षीय शक्ति युद्ध के साथ साथ आम जनता को आतंकित करने, पीडि़त करने जैसी कार्रवाइयाँ भी देखने सुनने को अक्सरहा मिली। जन आतंक ग्रामीणों से, नौकरी करनेवालों से, व्यवसायियों/ब्यापारियों से बड़ी मात्रा में धन की वसूली, आदि की मांग पहले तो चन्दे के रुप में, चन्दें जैसे होती थी। जिसे लोग बिना किसी विशेष परेशानी के दिया करते थे। बाद में इनकी मात्रा रीढ़ की हड्डी तोड देनेवाली जैसे हो गयी। यह भी सुनने को मिलता - माओवादी के नाम पर अन्य असामाजिक तत्व इन असामजिक आतंककारी कार्यो को अंजाम देते। सहसा प्रश्न आता हैं आखिर माओवादी जनयुद्ध का जन्मदाता कौन सा आतंक या अन्याय हैं ?

आज भी यदि हम सरकारी गैरसरकारी पदाधिकारियों के कार्यकलाप को देखते हैं। क्या पाते हैं ? कितना न्याय ? कितना अन्याय ? अख्तियार दुरुपयोग अनुसन्धान आयोग द्वारा की गयी कार्रवाइयों से प्रमाणित है कि देश के मंत्री तथा सचिव, महानिर्देशक, निर्देशक, प्रशासनिक वड़े अधिकारी भ्रष्टाचार तथा अन्यायपूर्ण कर्मो में लिप्त हैं। नेपाल की पुण्य भूमि पर पैदा हुए बुद्ध के विचार राज्य शासन तथा

जनव्यवस्था के संबंध में निम्नलिखित हैं ।

"- यदि राज्य का शासक अच्छा और न्यायप्रिय हो तो राज्य के मंत्री अच्छे तथा न्यायप्रिय होंगे । यदि राज्य के मंत्री अच्छे तथा न्यायप्रिय हो तो उच्च पदीय पदाधिकारी में अच्छे तथा न्यायकरने वाले होंगे । यदि उच्च पदीय पदाधिकारी अच्छे तथा न्याय करनेवाले हो तो सामान्य पदाधिकारी तथा कर्मचारी भी अच्छे तथा न्याय करनेवाले होंगे । यदि सामान्य पदाधिकारी तथा कर्मचारी अच्छे तथा न्याय करनेवाले हो तो देश के सामान्य जन अच्छे तथा न्याय प्रिय होगें" ।

यदि इसके दूसरे पक्ष को देखे जहाँ सामान्य जन आतंक (अर्थात नेपाल के नागरिक माओवादी तथा माओवादी के नाम पर दुसरे) आतंक फैलानेवाली क्रियाकलाप तथा हिंसा जैसी कार्रवाइयाँ करते हुए देखे जा रहे थे । आखिर इसका जन्मदाता था कौन ? यदि हम बुद्ध के विचारो को एक आधार के रुप में देखें तो क्या ऐसा नहीं लगता कि जन सम्पर्क में रहनेवाले पदाधिकारी तथा कर्मचारी में पदीय आतंक, पदीय अन्यायपूर्ण व्यवहार की पैदावर ही जन आतंक हैं । क्या ऐसा नहीं हुआ कि जनता के पास अन्याय, शोषण हेतु पद नहीं थे, तो उनलोगो ने बन्दूक का सहारा लिया ? क्या जन सम्पर्क में रहनेवाले अधिकारी तथा कर्मचारी के अन्दर पदीय आतंक, पदीय अन्यायपूर्ण चरित्र उच्च पदस्थ अधिकारी (सचिव) तथा मंत्री द्वारा किए गए पदीय आतंक एवं पदीय अन्याय की देन नहीं ? यदि एक पंक्ति में कहा जाय तो, क्या नेपाल में फैले हिंसा और आतंक का जन्मदाता (अपनी जनता द्वारा अपनी ही जनता और राष्ट्र विरुद्ध) नेपाल के उच्चपथस्थ पदाधिकारीयों, मंत्री के पदीय आतंक तथा अन्याय का ही कर्मीय बंशानुगत परिणाम नहीं ?

"न्याय राज्य शासन की रीढÞ होता हैं ।" इसी न्याय के आधार पर तो किसी राज्य में विधि व्यवस्था कायम रहती हैं । इस सिद्धान्त को मानते हुए ईगलैण्ड में अदालत की अवहेलना के आरोप में ईगलैण्ड के राजकुमार भी अदालत द्वारा दी गयी सजा भुगते हैं- जो जग जाहिर है। लेकिन आज नेपाल के विकट परिस्थिति में भी अदालत के आदेश को

उच्च पदीय अधिकारी नहीं मानते हैं । कितनी बार ऐसी घटनाएँ नेपाल के समाचार पत्रो में प्रकाशित हुई । समाचार पत्र में प्रकाशित हुआ था कि "पचास प्रतिसत से अधिक अदालत के फैसले अधिकारीयो द्वारा लागू नहीं किए जाते" ।

अब विचारणीय प्रश्न यह उठता है कि यदि राज्य के पदाधिकारी न्याय को नहीं मानेगे तो आम जनता कैसे विधि व्यवस्था को मानेगी । यदि देश के अधिकारी अपने आपको देश की न्यायपालिका से श्रेष्ठ समझने लगे तो क्या आम जनता अपने आपको विधि व्यवस्था के अधीन मानेगी ? यदि उच्च पदस्थ अधिकारी न्यायालय के आदेशों की अवहेलना करे तो क्या आम जनता शांति सुरक्षा के लिए की गयी कानूनों का अवहेलना नहीं करेगी ?

समाचार पत्र में प्रकाशित हुआ था-एक महिला (सफला देवी) अदालत के फैसले को पदाधिकारियों द्वारा लागू कराने के लिए वर्षो प्रयत्नशील रहीं लेकिन अंततः वह मृत्यू को प्राप्त की लेकिन अदालत द्वारा दिए गए न्याय को प्राप्त न कर सकी । इस महिला की मृत्यु में क्या इस पदाधिकारी के पदीय आतंक का सहयोग नहीं है ? यहाँ तो किसी ने नही देखा, शायद ईश्वर ही देखें । मुझे ऐसा लगता है कि यदि पदीय आतंक बंद हो जाय तो बन्दूकी आतंक स्वतः बंद हो जायेगें । यदि अधिकारी द्वारा अन्याय बंद हो जाय तो जन आतंक स्वतः रुक जायेगें ।

आज जब सारा देश आतंक एवं हिंसा की आग में जल रहा हैं । जन प्रतिनिधि, आमजन, राज्य अधिकारी सभी हिंसा से त्रसित है, फिर भी बडे लोग न्याय से दूर, लोभ से ग्रसित अन्याय करते जा रहे हैं । यह स्थिति ठीक वैसी ही दिखती है जैसे किसी सर्प के मुख में धडÞ तक फँसा मेढक एक फतीङ्गे को उडÞते देख खाने के लिए मुख खोलता हैं ।

दिसम्बर २००३ की रात्रि ९.२५ बजे (नेपालगंज में एक शक्तिशाली बम फटने का धमाका, साथ साथ लगभग १०।१५ मिन्टों तक अन्धाधुन्ध फायरिंग की आवाज से सारा नेपालगंज शहर भयभीत हो उठा । हमलोग (मैं और मियास्था 'एक जापानी' जो काम के सिलसिले में था)

भी होटल में भय और आशंका से घिरे रहे । कल होकर सुवह शहर के गणमान्य लोगों के मुख से, छात्रों से, शिक्षको सें, अन्य लोगो से रात्रि के भयावह स्थिति को वर्णन करते हुए पाया । यह बम विस्फोट हुआ था - एक निजी मोटर बाईक शोरुम में लाखों की क्षती थी । ऐंसा सुनने में आया "मालिक से कुछ लोगों ने पैसे माँगे थे, पैसे न मिलने की एवज में ये क्षति पहुँचायी गयी" । कमिशन तंत्र इतने जोरो पर है की कमिशन न मिलने पर न्याय को मौत देदी जाती हैं । उस न्याय को मौत दी जाती है जो शांति की जननी है । "जहाँ न्याय नही वहाँ शांति कहाँ ।" गोरखा के राजा राम शाह की न्यायप्रियता "न्याय न पाए गोरखा जानु" मात्र इतिहास की पंक्ति बन कर रह गयी है । शायद अधिकारी कमिशन तंत्र ने ही एक जनता द्वारा दूसरी जनता पर आर्थिक मांग की प्रथा को पैदा किया है तथा बढÞावा भी दे रहा है ।

माओवादी विद्रोह के संवन्ध में निम्नलिखित विचार नेपाली भाषा में प्रकाशित हैं -यु एस ए आई डी को सहयोगमा रवर्ट जसोनीद्वारा रोल्पा, रुकुम, सल्यान, सुर्खेत, बाँके र बर्दियाको अध्ययनपछि तयार गरेको प्रतिवेदन "कलहको बीऊ .... नेपालको राप्ती पहाडÞमा माओवादी विद्रोह को इतिहास र आयाम" मा विद्रोहको इतिहासकार साथै कम्बोडियाको खेमरुज र पेरुको सान्डेरो लुमिनोसो (साइनिङ्ग पाथ) सँग पनि तुलनात्मक अध्ययन गरिएको छ ।

अध्ययनको निष्कर्षमा भनिएको छ -'गाँजा अधिकांश परिवारको आम्दानीको स्रोत थियो र त्यसैले उनीहरुको उचित जीवनस्तर दिन सकेको मानिन्थ्यो । यसलाई रोकेको चार वर्षमै समृद्धि गरिबीमा रुपान्तरित भयों । प्रतिवेदन अनुसार, सरकारले एक पक्षीय रुपमा गाँजा खेती अवैध घोषित गर्नु अघि गुमेको आम्दानी पुर्ताल गर्ने वा वैकल्पिक अन्न बजार पुऱ्याउने उपाय दिन नसेकेका कारण तिक्त अवस्था ल्यायो । विभिन्न घटनाक्रमहरुले सरकार विरोधी भावनाको विकास पनि गराउँदै गयो ।

रोल्पा र रुकुममा धेरै समस्या भए पनि कम्युनिस्ट पार्टीको ५० वर्ष देखिको भूगोल लक्षित राजनीतिक सफलता पाउन सकेको थिएन । जब

सरकार र अन्य राजनीतिक पार्टी त्यहाँ अनुपस्थित भए, त्यहाँ रहेको पार्टीले जनताका भावनलाई भडकाउन सफल भयो र हिंसात्मक रुपमा सरकार फ्याँकेपछि यहाँका समस्या समाधान हुन्छन् भन्यो ।

जनजातीय र जातीय तत्वहरुलाई माओवादी विद्रोहका प्रमुख कारण मान्न सकिन्न : प्रतिवेदनमा भनिएको छ ।

अमेरिकी विद्वान डा. थोम्स ए मार्क्शको अनुसार - रुकुम, रोल्पा, जाजरकोट लगायतका जिल्लामा रहेको गरीबी, असमानता र अशिक्षालाई नै विद्रोहको उत्पत्तिको कारण हो । सुरुमा माओवादीले जनताकै साना समस्यालाई नाराका रुपमा उठाएर स्थानीय नागरिकको ध्यान आकर्षित गरेको विचार व्यक्त गर्नु भएको छ ।

'बहु विवाह, जाँड रक्सी, जुवा तास जस्ता सामाजिक विकृतिलाई नै उनीहरुले नारा बनाएर जनतालाई गोलबन्द गरेपछि मात्र राष्ट्रिय नारा थप्दै गए । रुकुम र रोल्पाका मगर समुदायलाई क्षेत्री र बाहुनले शोषण गरेको जस्ता जातीय विषय उछालेर संगठन बढाएको हो ।

अमेरिकी सहयोग नियोगको प्रतिवेदनबाट राष्ट्रीय दैनिक राजधानी, माघ १ २०६० मा 'गाँजा अवैध गर्नाले माओवादी हुर्किए' शिर्षक मा प्रकाशित ।

(प्रकाशित : राजधानी २२ जनवरी २००४ / ८ माघ २०६० शीर्षक विदेशीका लागि नेपालको नयाँ परिचय -बहादुर गोर्खालीको होइन, अव माओवादीको देश : डा. मार्क्स पृष्ठ-२)

परिवर्तन पथ

यह सत्य है कि नेपाल परिवर्तन चाहता है । इस परिवर्तन के लिए रास्ता क्या हिंसा के अलावा कोई दूसरा नही ?

लियो टॉल्स्टाय एक सैनिक की हैसियत से यह देखे की हिंसा क्या है और क्या-क्या कर सकती हैं । अत्याचार की समाप्ति के लिए "चिर प्रचलित उपाय हिंसा" को भी उन्होंने बड़े नजदीक से देखा । टॉल्स्टाय ने अत्याचार के समाप्ति अथवा किसी बुराई के सुधार के लिए हिंसात्मक उपाय के स्थान पर बुराई प्रतिरोध न करने के तरीके को प्रतिष्ठित करने के लिए अपना जीवन उत्सर्ग कर दिया । वे हिंसा के रुप में व्यक्त घृणा का सामना कष्ट सहन के रुप में व्यक्त प्रेम से करने के पक्षधर थे । गांधीजी ने भी स्वतंत्रता संग्राम के दौरान भारतीयो को भी यही संदेश दिया था और साथ साथ यह भी कहा था -"हमे रुकना और सोचना चहिए कि कही अंग्रेजी शासन से अधीर होकर हम एक बुराई के बदले दूसरी, उससे भी बड़ी बुराई को तो दाखिल नही करना चाहते ।"

यह कहना एक सामान्य सत्य रखना है कि प्रत्येक नेपाली की राष्ट्रीय आकांक्षाए होती है, किसी में यह भावना बहुत विकसित है, किसी में कम विकसित है । विशेषतः इस लक्ष्य की सिद्धि के रास्ते क्या हों - इस संबंध में शायद, जितने देशभक्त हैं, उतने ही मत भी हो ।

वर्तमान युग को मानवता के इतिहास में विज्ञान और विकास का युग माना जाता है । परन्तु इस समय भी ऐसे लोग विद्यमान हैं, जो समझते हैं कि हिंसा हत्याएँ करके राजनीतिक परिवर्तन अथवा अन्य सुधार प्राप्त किये जा सकते हैं । विज्ञान का दुरुपयोग विध्वंस कारवाईयो के लिए बहुत हुआ है । मानवीय ज्ञान और मानवीय साहस का दुरुपयोग हत्या-हिंसा के लिए बहुत हो रहा हैं । इस हालात को देखकर लोगो के

मन में क्या यह जिज्ञासा उत्पन्न नहीं होती होगी-जिसे विकास का नाम दिया जा रहा है, क्या वह सचमुच विकास हैं ? हत्याएं तो स्वार्थ के लिए हमेशा होती रही हैं । परन्तु व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए । हिंसा से राष्ट्र का कल्याण हो, समस्त जनता सुखी हो, ऐसा सम्भव नहीं । हमारी संस्कृति, मानव धर्म यह बिल्कुल नहीं मानता कि बुरे कर्म से अच्छे फल आयेगे ।

सच तो यह है कि हत्या और आतंक पर आया राजनैतिक परिवर्तन जो देश और जन हित में हो का विचार एक मिथ्या कल्पना मात्र हैं । इसका तो एक ही परिणाम होता है, जो सबके सामने हैं पहले से ज्यादा सरकारी और सैनिक कारवाईयों से दमन, (दोषी की खोज में निर्दोष की हत्या) विकास कार्यो में कमी, व्यापार में कमी । इस सबका परिणाम हुआ है - देश के गरीब तथा आम जनता का कष्ट बढ़ा है, देश का आर्थिक विकास समस्याग्रस्त हुआ है, सुयोग्य व्यक्तियों का देश से पलायन हो रहा है । इस अंधकारमय अवस्था में हम तो केवल ईश्वर से यही प्रार्थना कर सकते हैं, कि नेपाल हत्याओं के अभिशाप से मुक्त हो जाये और दिग्भ्रमित होकर हत्या और आतंक में संलग्न युवक-युवती सृजनात्मक कार्यो में लगे । एक दीर्घायु जन कल्याणकारी सत्ता परवर्तन तो केवल सत्य, न्याय और आत्मशुद्धि से प्राप्त हो सकती है - दूसरों को सताकर नहीं ।

हत्या के पीछे बच जाते है विधवा स्त्री, अनाथ छोटे बच्चे, बेसहारा बुढे माता पिता, उनकी करुण चीख, आँसू तथा जीवन का भारी बोझ । इन निर्दोषो के साथ क्या यह महा अन्याय नहीं है ? यदि यह अन्याय है, तो इसके लिए उत्तरदायी कौन है ? क्या यह सोचने के लिए विवश नहीं करता कि जो लोग कार्यफल में विश्वास करते हैं क्या वे इस दुष्कर्म के कर्मफल से बच पायेगें ? जो लोग पुर्नजन्म में विश्वास करते हैं, आत्मा की अमरता में विश्वास करते हैं, वे इस हत्या और निर्दोषो को दुःख देने के कर्म को सही कह पायेगे ? कदापि नहीं । सिर्फ जीवन जीना ही जीवन का लक्ष्य नहीं हैं, अपितु एक सार्थक जीवन जीना जीवन का अभिष्ठ लक्ष्य हैं ।

क्या इस हालात में यह सोचने की आवश्यकता नहीं हैं कि परिवर्तन के लिए कौन सा पथ चुने कि पहले से अधिक बुराई देश की शासन व्यवस्था में न आ जाए ।

डा. राधा कृष्णन ने कहा है - "पृथ्वी पर आदमी की कहानी का सब से बड़ा तथ्य उसकी पार्थिव प्राप्तियाँ नही है । जो साम्राज्य उसने बनाये और बिगाड़े वे महत्वपूर्ण नहीं हैं । महत्वपूर्ण तो है उसकी आत्मा का सत्य और शिव की खोज करते हुए युगानुयुग विकास । जो आत्मा की विकासोन्मुख यात्रा में संलग्न रहते हैं वे मानव संस्कृति के इतिहास में अमर स्थान पा जाते हैं । समय ने वीरों की गाथाओं को उतनी ही आशानी से तुच्छ बना दिया है जितनी आशानी से वह साधारण लोगों को भूला दिया, किन्तु संतों की सत्ता अक्षुण्ण रही है ।

जीवन और मृत्यु के सम्बन्ध में गांधीजी कहते है -"जीवन और मरण एक ही चीज के दो रूप हैं एक ही सिक्के के दो पहलू हैं । दरअसल मुझे दुःख और मौत, सुख और जीवन से ज्यादा समृद्ध जान पड़ते हैं । दुःख और वेदना के विना जिन्दगी में क्या सार है ? .... रामायण में सीता और राम के दुःख, वेदना और तप के सिवा दुसरा क्या है ? .... मैं चाहता हूँ कि आप लोग जीवन के बजाय मौत और दुःख की ज्यादा कीमत आंके और उसे अपने मन का मैंल धोनेवाली एक शक्ति समझें ।"

अहिंसात्मक सत्याग्रह नेपाल के सन्दर्भ में

अहिंसा महापुरुषों की दृष्टि में

गांधीजी ने कहा हैं कि शान्तिपूर्ण ढंग से मुकाबला करनेवालों में ईसा सरताज थे । उन्होंने विरोधियों की शक्ति को चुनौती दी और बेटों को माता पिता के मुकाबले में खड़ा कर दिया । दुर्भाग्य से ईसा के अनुयायी ईसा का संदेश भूल गए । यूरोप के धार्मिक युद्ध - क्रूसेड और इन्क्यूजीशन और इन सब से बढ़कर ईसाई राष्ट्रों के अधिक आधुनिक कारनामें मानव-इतिहास में अंकित अत्यन्त शर्मनाक घटनाओं में से है ।

प्लेटो (४वी शताब्दी ई. पू.) से जब उसके सैनिकों ने उससे शत्रु का सिर काट डालने को कहा तो वह बोला "केवल मित्रों और अपने प्रति अच्छा वर्ताव करनेवालों से अच्छा वर्ताव करना काफी नहीं है । हमें उन्हें भी क्षमा करना चाहिए जिन्हों ने हमें हानि पहुँचाई है और हमारे साथ बुरा व्यवहार किया है । आदमी में ऐसी बुराई नहीं जो बार-बार अच्छा व्यवहार करने पर सुधारी और जीती न जा सके ।" उसने यह भी लिखा है - किसी को भी दुःख मत दो ।

कुछ हिब्रु मसीहाओं ने भी हिंसा पर अहिंसा की तरजीह दी हैं । एक कहता है, शत्रु को गिरता देखकर हर्ष मत मनाओ, अपने मन में प्रसन्नता मत आने दो । अगर तुम्हारा शत्रु भूखा है तो उसे रोटी दो, प्यासा है तो उसे पानी दो ।

थॉरो ने संयुक्त राज्य अमेरिका की सरकार को गुलामी-प्रथा के लिए धिक्कारा और उसने 'अत्याचारी सरकार' कहकर टैक्स देने से इन्कार कर दिया । कानून का विरोध किया और जेल गए । जेल से मुक्त होने पर उस ने 'सविनय अवज्ञा के गुण' नामक प्रसिद्ध निबंध लिखे । जिस से गांधीजी भी प्रभावित हुए तथा इस पद्धति का उपयोग कर एक

नए इतिहास को रच दिए ।

"अहिंसा परमोधर्मः" हमारे महान ग्रन्थ महाभारत के महान वचन हैं । प्राचीन ऋषियों ने कहा है - "देखने में अधर्म से आदमी बढ़ता है, धन लाभ करता है, शत्रुओं को जीतता है, किन्तु मूल में वह नष्ट हो जाता है ।"

हमारी संस्कृति में सत्य का आदर्श

गांधीजी सत्य को ईश्वर मानते थे ।

"दुर्लम्य मार्गो को लाँधो, क्रोध को अक्रोध से और असत्य को सत्य से जीतो ।"

– ***सामवेद***

"सत्य से बढ़कर कोई धर्म नहीं और झुठ से बढ़कर कोई पाप नहीं । वस्तुतः सत्य ही धर्म का मूल है ।"

– ***महाभारत***

युवराज रामचन्द्र को दरबार के एक पुरोहित ने सलाह दी थी कि वह अपने पिता को दिए चौदह वर्ष तक वन में रहने के वचन से मुकर जाय । किन्तु, उसे उत्तर देते हुए अमर कीर्ति रामचन्द्र कहते हैं : "सत्य और दया, राज धर्म के अविस्मरणीय अंग हैं । इसलिए राज्य शासन तत्वतः सत्य ही है । सत्य ही संसार का आधार हैं । ऋषि और देव दोनों ने सत्य का आदर किया है । जो मनुष्य इस लोक में सत्य बोलता है, वह श्रेष्ठ और अमर पद को प्राप्त करता है । मिथ्यावादी मुनष्य से लोग, भय और आतंक के मारे, ऐसे परे भागते हैं जैसे कि सांप से । संसार में धर्म का मुख्य तत्व सत्य है । सत्य प्रत्येक वस्तु का आधार है । सत्य संसार में सर्वोपरि है । धर्म का आधार सदा सत्य ही है । कोई भी वस्तु इस से उँची नहीं । मैं अपने वचन का पालन क्यों न करूँ ? अपने पिता के सत्य आदेश पर सचाई से क्यों न चलूं ? मैं लोभ-लालच, बहकावे या अज्ञान

के वश में होकर या अपनी दृष्टि कलुषित हो जाने के कारण सत्य की मर्यादा का उल्लंघन नही करुंगा । मैं पिता जी को दिए हुए वचन का पालन अवश्य करुंगा । मैं उन्हें वनवास का वचन दे चुका हूँ , अब मैं उनके आदेश का उल्लंघन करके भरत की बात कैसे मान सकता हूँ ?"

(प्रो. मैंक्समूलर के अंग्रेजी अनुवाद से) – ***रामायण***

"जो मुनष्य सच्चा नहीं या झुठ बोलकर धन कमाता है, या जो दूसरों को दुःख देने में सुख मानता है, वह इस संसार में कभी सुखी नहीं हो सकता । धर्म से पीडिÞत होकर भी पाप में प्रवृत्त नहीं होना चाहिंए, ऐसा करनेवाला पाप और पापियों का पतन शीघ्र ही प्रत्यक्ष देख लेता हैं । संसार में पापाचरण का फल, गौ के समान, शीघ्र प्रकट नहीं होता, परंतु वह धीरे-धीरे पापी की जडÞ तक को काट डालता हैं ।"

– ***मनु स्मृति***

"सच और झूठ की टक्कर ऐसी है, जैसी कि पत्थर और मिट्टी के बर्तन की । पत्थर मिट्टी के बर्तन पर गिरेगा तो बर्तन टुट जायेगा । दोनो हालतों में नुकसान मिट्टी के बर्तन का ही होगा ।"

– ***सिक्ख धर्म की सोख***

सत्याग्रह राजनैतीक युद्ध का सर्वोत्तम हथियार

वर्तमान युग के महान संत राजनीतिज्ञ गांधीजी के विचार से सत्याग्रह की तलवार इस्पात की तलवार को भी निस्तेज कर देनेवाली है । उसकी धार सत्य और न्याय की है और उसमें मूढ़ ईश्वरीय सहायता की लगी है । उससे जो लड़ता है उसे हारने का डर नही रहता । इसीलिए हे वीर भारतीयों, उठो और बाट न जोहकर सत्याग्रह की तलवार को धारण करके बिजय प्राप्त करो । जब से जापानी वीरो ने मंचुरीया के मैदान में रुसियो को धुल चटाई है, तब से पूर्व में सूर्योदय

हो चुका है । अब पूर्व के लोग घमण्डी गोरों के द्वारा किए गए अपमान को अधिक समय तक हर्गिज सहन न करेंगे ।

"इंडियन ओपीनियन" २७.६.१९०८

सत्याग्रह के संबंध में गांधीजी कहते थे - "सत्याग्रह शुद्धतम हथियार है, यह कमजोरों का हथियार नहीं हैं । शरीर बल से प्रतिकार करनेवाले व्यक्ति की अपेक्षा इसमें कहीं अधिक हिम्मत की जरुरत होती हैं । शांति के साथ कष्ट सहन करते हुए मृत्यु का स्वागत ईसा, डैनियल, कैनमर, लैटिमर और रिडले जैसे पुरुष ही कर सकते हैं । और रुस के जारों की अवज्ञा करने का साहस टॉलस्टाय जैसे लोगो में ही पाया जाता है । ऐसे ही व्यक्ति श्रेष्ठ पुरुष माने जाते है । इतिहास साक्षी है कि दक्षिण अफ्रिका के नौजवानों और लडÞकीयों ने अपनी जान देकर सद असद विवेक को जगाया ।

आठ वर्षो के सत्याग्रह संघर्ष के बाद दक्षिण अफ्रिका में प्रवासी भारतीयों ने मानविय सम्मान और अधिकार प्राप्त किया ।
गांधीजी कहते थे कि सत्याग्रह सरल भी है और कठिन भी । सत्य का ही आग्रह रखने से सारे दुःख दूर हो सकते हैं, अब यह बात सब की समझ में आशानी से आ जानी चाहिए । सत्य का पालन दुःख दूर करने के लिए दुःख सहना कठिन लगता है । फिर भी ज्यों -ज्यों विचार करता हुँ, त्यों-त्यों सिवा सत्याग्रह के कोई दूसरा उपाय अपने अथवा किसी दूसरे के दुःखों के (निवारण के) लिए सूझ नहीं पड़ता । मुझे तो ऐसा भी लगता है कि उसके सिवाय कोई सच्चा इलाज दुनिया में है ही नही । ऐसा हो या न हो, किन्तु हम तो अब यह समझने लगे हैं कि सत्याग्रह से विजय पाना (ज्यादा) ठीक रास्ता है ।

जो जो राष्ट्र उँचे हैं उन्हों ने पहले कष्ट सहन किये हैं, यह बार -बार स्मरण रखना चाहिए । यदि हम उँचे उठना चाहते हों, तो हमारे लिए भी यही उपाय है ।

'इंडियन ओपिनियन' १७.१०.१९०८

सत्याग्रह टॉल्स्टॉय के विचार में

(इस पत्र में गांधी जी के सत्याग्रह के सम्बन्ध में टॉल्सटॉय का विचार देखने को मिलता है ।)

यास्नाया पोल्यान
८.५.१९१०

प्रिय मित्र,

आपका पत्र और आपकी पुस्तक 'हिन्द स्वराज' अभी मिले हैं । मैं ने आपकी पुस्तक बड़ी दिलचस्पी के साथ पढ़ी, क्यों कि मेंरा ख्याल है कि जिस प्रश्न की (सत्याग्रह की) आप ने उस में चर्चा की है, वह केवल भारत के लिए नहीं बल्कि समस्त मानव जाति के लिए बड़े महत्व का है ।

- लियो टॉल्सटॉय

सत्याग्रही कौन हो सकता है ?

सत्याग्रही के गुण के संबंध में गांधीजी के विचार इन्डियन ओपेनियन में प्रकाशित हुए, जो निम्न हैं -

सत्याग्रह के अर्थ पर विचार करते हुए हम देखते है कि पहली शर्त यह है कि लड़नेवालों में सत्य का आग्रह - सत्य का बल होना चाहिए, अर्थात उस व्यक्ति को केवल सत्य के उपर निर्भर रहना चाहिए । एक पग दही में और एक पग दूध में रखने, अर्थात दो नावों पर पैर रखने से काम न चलेगा । ऐसा करनेवाला व्यक्ति (शरीर बल और नैतिक बल के दो पाटों के) बीच में कुचल जायेगा । सत्याग्रह कोई गाजर की पीपनी नहीं है कि वह बजेगी तो बजायेंगे और नहीं तो खा जायेंगे ।

सत्याग्रह में शरीर बल पर निर्भर व्यक्ति के मुकाबले हिम्मत ज्यादा होनी चाहिए । इस प्रकार सत्याग्रही के लिए सब से पहले सत्य का सेवन करना, सत्य के उपर आस्था रखना आवश्यक है । उस में पैसे के प्रति अनाशक्ति होनी चाहिए । सम्पत्ति और सत्य में सदा अनवन रही

है और अंत तक रहेगी। जो सम्पत्ति से चिपकता है वह सत्य की रक्षा नहीं कर सकता। इसका अर्थ यह नहीं है कि सत्याग्रही के पास सम्पत्ति हो ही नहीं सकती। हो सकती है, किन्तु पैसा उसका परमेश्वर नहीं बन सकता। सत्य का सेवन करते हुए पैसा रहे तो ठीक है, अन्यथा उसको हाथ का मैंल समझकर त्यागने में एक पल के लिए भी झिझक न हो। जिस ने अपना मन ऐसा न बनाया हो उससे सत्याग्रह हो ही नही सकता। सत्याग्रही अत्याचार में तो भाग ले नहीं सकता, इसलिए गरीबी में ही अमीरी मान लेना उसके लिए उचित होता है। सत्याग्रही को कुटुम्व का मोह छोड़ना पड़ता है। यह बहुत मुश्किल बात है। किन्तु सत्याग्रह, जैसा उसका नाम है तलवार की धार है, क्यों कि कुटुम्बियो को भी सत्याग्रह की लगन लगने का अवसर आता है और यह लगन जिस को लगती है, उसको फिर दूसरी इच्छा नहीं रहती। कोई खास दुःख सहते हुए-धन गंवाते हुए या जेल जाते हुए-यह शंका या चिन्ता नहीं होनी चाहिए कि कुटुम्व का क्या होगा।

इस प्रकार सत्याग्रही कौन हो सकता है, इस का विचार करते हुए यह परिणाम निकलता है कि जिस की धर्म में-दीन में-सच्ची आस्था है, वही सत्याग्रही हो सकता है। 'मुख में राम, बगल में छुरी' जैसी आस्थावाला नहीं। दीन का नाम लेकर दीन के खिलाफ काम करना दनीन नहीं हैं। जो धर्म, दीन ओर इमान की रक्षा उचित प्रकार से करता है वही सत्याग्रही हो सकता है। इसका अर्थ यह कि जो मनुष्य सब-कुछ खुदा या ईश्वर पर ही छोड़ देता है, उसको संसार में कभी हारना ही नहीं पड़ता। लोग हारा हुआ कहें, उससे वह हारा हुआ नहीं माना जायेगा। लोग उसे जीत हुआ मानें तो उसमें उसकी जीत भी नहीं है। इसको जो जानता है, वही जानता है।

जिसने सत्याग्रह की खातिर अपने सर्वस्व का त्याग किया है, उसने सब कुछ पा लिया है, क्योंकि वह संतोष मानता है और संतोष सुख है।

हम चाहते है कि ऐसा सोचकर हर एक भारतीय सत्याग्रही बने।

यह हथियार हाथ लग जायेगा तो अन्याय जनित सभी दुःखों को दूर करने में काम आयेगा। इसको समझना जैसा सहज है, वैसा ही कठिन भी है। शरीर के बली भी थोड़े होते है, फिर सत्य के बली तो उन से भी कम होते हैं।

इंडियन ओपीनियन २९.५.१९०९

अहिंसात्मक सत्याग्रह का प्रयोग

दक्षिण अफ्रीका में गांधीजी के नेतृत्व में सत्याग्रह जन्मा और सफल भी हुआ। वहीं अहिंसात्मक संघर्ष की नींव भी पड़ी। गांधीजी का सत्याग्रह जातियतावाद, उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद के खिलाफ देश-विदेश में हुआ सफल संघर्ष था, जिस ने एक इतिहास को बना डाला।

गांधीजी के मतानुसार शोषण-वृत्ति को भंग करना होगा - शासन द्वारा नहीं अहिंसात्मक असहयोग द्वारा, रचनात्मक कार्य द्वारा। गांधीजी के अहिसा मार्ग में शोषित मुनष्य धनी व्यक्ति से कहेगा - तुम्हारी शोषणवृत्ति अब नहीं चल सकती आत्मशक्ति द्वारा हम उसका प्रतिरोध करेंगे। डा. राधा कृष्णन् ने कहा हैं "कुछ व्यक्तियों नें अपने व्यक्तिगत जीवन में प्रेम की पद्धति को जहाँ तहाँ काम में लाकर देखा है, किन्तु सामाजिक और राजनीतिक मुक्ति की योजना को सफल बनाने में गांधीजी ने इस आदर्श को कारगर तरीके से अपनाया, यह उनकी परम सफलता है। भारत और दक्षिण अफ्रिका में संगठित दलों ने उनके नेतृत्व में अन्याय हटाने की दिशा में इसका बड़े पैमाने पर उपयोग किया। शारीरिक हिंसा के प्रयोग से अछूते रहकर राजनीतिक ध्येयों की प्राप्ति के लिए सत्याग्रह पद्धति का विकास उन्होंने किया। यह पद्धति भारत की परम्परागत आध्यात्मिकता को किसी प्रकार भी हानि नहीं पहुँचाती, बल्कि वहीं से अपनी शक्ति ग्रहण करती है।

गांधीजी कहते हैं - "सत्याग्रह निष्क्रिय शान्तिपूर्ण प्रतिरोध से उतना ही दूर है जितना दक्षिण ध्रुव, उत्तर ध्रुव से। शान्तिपूर्ण प्रतिरोध

का जन्म लाचार की लाचारी से है और हिंसा या शारीरिक शक्ति से अगर लाभ होने की सम्भावना दिखे तो उसका निष्कासन इस में से नहीं है, किन्तु सत्याग्रह लाचार का हथियार नहीं है, वह तो अत्यन्त शक्तिवंतों का शस्त्र है और किसी भी रूप में हिंसा के उपयोग की उस में गुंजाइश नहीं हो सकती ।" निष्क्रियता तो उन्हें विल्कुल सहन नहीं थी । चुप बैठ रहने से, अन्याय के चरणों में समर्पित करने से उन्हें लड़कर हार जाना श्रेयष्कर जान पड़ता था । रोमां रोलां ने सत्याग्रह को इन शब्दों में बहुत ठीक रूप में वर्णित किया हैं , "गांधीजी के आन्दोलन का प्राण - सक्रिय प्रतिरोध - स्नेह, श्रद्धा और त्याग की भावना से धधकता हुआ 'सक्रिय प्रतिरोध' है । सत्याग्रह में इन शक्तियों की अभिव्यक्ति हैं ।

दक्षिण अफ्रिका के अहिंसात्मक सत्याग्रह का परिणाम

दक्षिण अफ्रिका में किए गए अहिंसात्मक सत्याग्रह के प्रयोग को गांधीजी बहुत गंभिरता से लिए और प्रयोग के परिणाम को निम्न शब्दो में लिखे । जो ईडियन ओपिनियन में प्रकाशित हुए -

सरकार ने जब जब (हमारे साथ) धोखा किया, तब तब उसे हमे अधिक अधिकार देने पड़े । इसीलिए यह कहावत है, कि, 'दगा किसका सगा ?' धोखेवाजी तो तभी छिपी रह सकती है जब दोनो पक्ष थोड़ी बहुत धोखाधड़ी करते हों । पर सत्याग्रही में तो धोखा एक पक्षीय ही हो सकता है, सत्याग्रही तो धोखा कर ही नही सकता ।

सत्याग्रह से दूसरी यह बात भी समझ में आ सकती है कि ज्यों-ज्यों सघर्ष बढ़ता गया, लोगों की ताकत भी बढ़ती गई और साथ ही उनकी कष्ट-सहिष्णुता भी । और वह इस हद तक कि पिछले वर्ष के अन्त में जैसी कुछ मुसीबतें हमने झेलीं, आज के इतिहास में उनके मुकाबले में पेश करने योग्य कोई उदाहरण नहीं मिल सकता । और ज्यों-ज्यों हम ने कष्ट उठाये, त्यों-त्यों हमें राहत मिलती गई । इस में प्रकृति का एक दूसरा अटल सिद्धान्त भी प्रतिष्ठित होता है कि मुनष्य को उतना ही सुख प्राप्त होता है जितना दुःख वह उठा पाता है । जमीन को उपर

उपर छीलने वाले के साथ निरी घास ही आयेगी, (पुष्ट) अन्न की फसल तो जमीन की गहरी जुताई करनेवाला ही पायेगा । अतः बिना दुःख उठाये सुख की आशा करना दुराशा मात्र है । संसार में तपश्चर्या फकीरी आदि इसी प्रकार सुप्रतिष्ठित हुए और इसी प्रकार उसकी महता गायी गई है ।

समाज ने दुःख उठाकर जो कुछ हासिल किया है उसे सुरक्षित भी, दुःख सहन करने की शक्ति को अक्षुण्ण रखकर ही, बनाया जा सकेगा और इसी प्रकार उस में बृद्धि भी की जा सकेगी । और यदि यह शक्ति जाती रही तो जो हासिल किया है सो तो जायेगा ही, कुछ और भी चला जायगा । यह बात समझ में तो सहज ही आ जाती है, परन्तु अनेक बार हम उसे भूल जाया करते हैं ।

- ईडियन ओपिनियन

नेपाल में शासन तंत्र का अन्याय सर्वविदित है । इसके विरुद्ध माओवादी हिंसक जनयुद्ध एक दशक तक चलता रहा । अब मधेशी मानव अधिकार आन्दोलन के दौरान सरकार और जनता की ओर से होनेवाली घटनाओं को देखकर लगता है कि हिंसा लोगों के मन से गयी नहीं है । अहिंसक सत्याग्रह का नेपाल में कभी प्रयोग हुआ ही नहीं । अहिंसक सत्याग्रह से सभी वर्गों को उनका न्यायोचित अधिकार प्राप्त होगा । यह अन्याय के विरुद्ध अपने मानवीय अधिकारों के लिए हिंसा के बिना अटल सक्रिय प्रतिरोध है । इसमें मानवीय प्रेम और त्याग सदैव वर्तमान रहते हैं । इससे हम सबको अपना अपना अधिकार भी प्राप्त होगा । साथ-साथ हमारे बीच का आपसी प्रेम भाव भी बना रहेगा । यह एक मात्र मार्ग हे जो देश को विध्वंस और विखण्डन से बचा सकता है ।

अहिंसात्मक सत्याग्रह नेपाल में क्यों

आज नेपाल में परिवर्तन के लिए रक्तपात का सिलसिला शुरू हो गया है । अफसोस है कि इस छोटे से, लगभग ढाई करोड़ की आवादीवाले देश में अबतक हजारों राष्ट्र सम्पत्ति युवा अपनी जान गवाँ चुके हैं । इस गरीब मुल्क की अरबों की सम्पत्ति क्षति हुई होगी जिसे पूरा करने में देश को दशक लगेंगे । क्या इस परिवर्तन के लिए हजारों बलि आवश्यक है ? क्या ऐसा रास्ता नहीं जिससे कम से कम जन-जान और राष्ट्रधन की क्षति से न्यायोचित परिवर्तन प्राप्त किया जा सके ?

हिंसात्मक क्रान्ति ज्वालामुखी जैसे फूटी और आग की लपटों जैसे सारे देश में फैल गयी । अन्याय, और असत्य के विरुद्ध बदलाव के लिए शांतिपूर्ण आवाज उठाने से हम चुके हैं । न्याय और सत्य की जन चाहना को देश के सामने सशक्तरुप से रखना छुट गया । हिंसात्मक कारवाइयों को दुनिया एकाएक जानी, लेकिन हम दुनिया को "हम पर हो रहे अन्यायको न जना सके, हो रहे मानव अधिकार के हनन को न बता सके । हमने इसके लिए क्या किया ? कैसे किया ? कुछ भी दुनिया को न दिखा सके, न सुना सके ।"

यदि हिंसात्मक और अहिंसात्मक दोनो क्रान्तियों की तुलना की जाय, तो अहिंसात्मक क्रान्ति देश और जनता दोनों के हित की रक्षा करते हुए न्यायोचित परिवर्तन लाने में समर्थवान होता है । हिंसात्मक क्रान्तिद्वारा देश और जनता दोनों को ज्यादा क्षति उठानी पडÞती है । साथ-साथ पहले की अपेक्षा दूसरी बडÞी बुराईयों के देश और जनता में आने का भय भी बना रहता हैं ।

शोषण, साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद, जातीयतावाद के खिलाफ दुनिया के अनेक देशों में क्रान्तियां हुयी और बदलाव भी आए । अधिकांश देशों में सशस्त्र बल से क्रान्ति हुयी, जहां रक्तपात और राष्ट्र तथा व्यक्तिगत सम्पति की हानि बहुत बडÞे पैमाने पर हुयी । लोगो के दिल

में दया करुणा जैसे मानवीय गुणो का अभाव रहा । परन्तु महात्मा जी के नेतृत्व में अंग्रेजी हुकूमत के अन्याय-असत्यपूर्ण रवैये के खिलाफ बिना किसी हथियार के नैतिक बल और आत्मिक बल से सफल संघर्ष हुआ । परिवर्तन तो प्रकृति का अटल नियम है । "सत्यमेव जयते ।" सत्य की विजय सदैव होती है । गांधीजी का अहिंसात्मक असहयोग, सत्याग्रह – जातीयतावाद, उपनिवेशवाद, साम्राज्यवाद, दमन और शोषण की नीति के खिलाफ दक्षिण अफ्रिका, भारत तथा दुनिया के दूसरे देशों में हुआ सफल संघर्ष था, जिस ने एक नया इतिहास बना डाला । इसमें राष्ट्रीय सम्पत्ति तथा जनता की जान की हानि कम होती है । लोगों का आत्मबल बढ़ता है । उनमें सहनशक्ति, दया, करुणा जैसे मानवीय गुणों का विकास होता है ।

मानव धर्म कहता है, "मानव जीवन का परम उद्देश्य भौतिक उन्नति से अधिक आत्मोन्नति करना है । खड़ा हिमालय अपनी दृढ़ता और उँचाई से शान्ति और विकास का संदेश देता है । हरेभरे वन खुशहाली का संकेत देते हैं । पहाड़ों के बीच से गुजरती नदियाँ जीवन का सुमधुर संगीत सुनाती है ।

मेरे पास ऐसा कोई तर्क नहीं है, जो यह सिद्ध करे कि नेपाल के वातावरण में सशस्त्र या अहिंसात्मक क्रान्ति, दोनों में कौन आवश्यक और उपयुक्त है । परन्तु मेरा यह दृढ आत्म-विश्वास है कि अभी तक इस देश और यहां के लोग जितनी क्षति उठाएं है, उससे कम क्षति में अहिंसात्मक सत्याग्रह के रास्ते न्यायोचित परिवर्तन प्राप्त किया जा सकता है ।

आइए, अब हम सब ईश्वर के नाम, मानवता के लिए, अपनी मिट्टी पर हथियारों की मूठभेड़ और बमों के धमाकों से इसकी शांति को न बिगाड़ें । बन्धुत्व और सहयोग से अमन-चैन की जिन्दगी जीयें और दूसरों को भी उतनी ही अच्छी जिन्दगी जीने दें ।
न्यायोचित परिवर्तन अहिंसा और सत्याग्रह के माध्यम से हासिल करनें की क्रान्ति करें ।

ईश्वर हमारे देश और विदेश में शांति हेतु हमारे कल्याणकारी शुभ कार्यों में मदद करें ।

देश के मूलधार की चाहत में मधेशी

राजधानी समाचार पत्र मिति २०६०।८।११ (नोभेम्बर २७, २००३) में प्रकाशित कुमार यात्रु द्वारा लिखित "आन्दोलन मधेसीको साझेदारी राष्ट्रवादको" शीर्षक में कहा गया है कि -

देशका केही बुद्धिजीविहरु हामीलाई विदेशी भन्छन् तर, हामी नेपाली हौं, जसरी पहेंलो सबै वस्तु सुन हुदैन, त्यसैगरी काला मान्छे सबै भारतीय हुँदैनन् - एक दशक अगाडी त्रिभुव विश्वविद्यालयको प्रांगणमा बीरगन्जबाट समाजशास्त्रमा अध्ययन गर्न आएका रुपलाल कुसवहाले यस पंक्तिकारलाई यस्तै शब्द प्रयोग गरेर मधेशीहरु पनि नेपाली राष्ट्रवादका पक्षपाती भएको सम्झाउन खोजेका थिए । प्रजातंत्र पुनवर्हालीपछिका १३ वर्षमा कालो वर्णका नेपालीहरुका यस्ता गुनासा पटक पटक सुनदै आएको पनि हो । विशेष गरी सद्भावना पार्टीका मान्छेले यस्तो कुरा गर्दथे । तर, हिजोआज यस्तो आवाज मधेसी जातिको हकहितको पक्षमा लागेका सद्भावना पार्टीका कार्यकर्ताले मात्र गर्दैनन् मूलधारको राजनीतिमा लागेका कांग्रेस, एमाले, राप्रपाजस्ता पार्टीका कार्यकर्ता पनि रुपलालकै जस्तो जातीय विभेदको कुरा गर्न थालेका छन् ।

प्रसिद्ध समाजशास्त्री लिआई रोजले "आइडेन्टीटी क्राइसिस इन नेपाल" लेखेको पनि तीन दशक वितेको तापनि सरकारले मधेशीको दयनीय अवस्था माथि ध्यान दिएको छैन ।

मधेश के आंशू :

नेपाल में मधेशी आन्दोलन कई दशको से चलता आ रहा है । दुनिया के अन्य आन्दोलन के जैसा कभी तीब्र होता है तो कभी धीमा पड़ जाता है । सरकारी तंत्र से दमन भी सदैव होता रहा है । यह आन्दोलन

सत्य और न्याय पर आधारित है । पूर्व के दिनों में पूर्णतः शान्ति पूर्ण और अहिंसक रहा है । पर अब कुछ आतंक की और हिंसक घटनांए भी सुनने को मिल रही हैं । इससे मुझे दुःख होता है क्योकी हिंसा से मधेश और देश दोनो का ही बडा नुकसान है । विशेष नुकसान मधेशियों का होगा, और यह नुकसान जनता को ही उठाना पडेगा ।

यदि मधेशी वास्तव में अपना सम्मान अपने देश में चाहते हैं, अपना अधिकार चाहते हैं। तब उन्हें अपने सम्मान को प्राप्त करने हेतु कीमत चुकानी होगी तथा अधिकार हेतु देश प्रति अपने कर्तव्य भी पुरा करने होंगे । इसमें दोनो ओर से, अर्थात मधेशी जनता और नेपाल की सरकार, को अपने कर्मो द्वारा एक दूसरे के प्रति अपने कर्तव्य निभाने होगें । मधेशियों के लिए मेरा सुझाव गांधीजी के अहिंसात्मक सत्याग्रह की ओर होगा । यह सत्य और न्याय पर आधारित ईश्वरीय लडाई होगी, क्योकि सत्यमेव जयते । संत महात्मा कहते हैं । चालाक लोग चालाकी से , कमजोर और सीधे-साधे लोगों का धन और अधिकार छिनकर कुछ समय के लिए धनवान और सम्मानित बन जाते हैं । परन्तु, धीरे-धीरे यह पाप उनका सर्वनाश कर डालता है । नेपाल में आज मधेशियों की दशा कुछ ऐसी है जो २० वी सदी के प्रारम्भ में (लगभग सौ साल पहले) दक्षिण अफ्रिका में प्रवासी भारतीयो की थी । उस संवंध में गांधीजी ने जोहांसवर्ग (दक्षिण अफ्रिका के राजधानी) के न्यूटाउन मस्जिद में एक भाषण किए जो इंडियनओपिनियन में १८।१।१९०८ को छपा था ।

अपने सम्मान और गौरव की रक्षा के लिए अपना सर्वस्व लुटा देने की प्रेरणा गांधीजी दक्षिण अफ्रिका के भारतियों को एक पत्र द्वारा देते हैं जो जोहांसवर्ग से १०।१।१९०८ में लिखी गयी थी तथा १८।१।१९०८ को इंडियन ओपिनियन समाचार पत्र में छपी थी ।

मधेशियों को भारतीय कहना- यह असत्य और बेईमानी है । उनकी मानवीय आवाज को विखंडनबाद से जोडना - उनके (मधेशियों के) साथ घोर अन्याय और नेपाल राष्ट्र के साथ धोखा हैं । एक माता पिता की दो संतान में, एक ताकतवार हो जाय और दुसरा कमजोर ।

उस हालात में यदि ताकतवार संतान कमजोर संतान के पैतृक सम्पति, पैतृक हकहित को यदि चालाकी और शक्ति के बल पर हर लेता है, उसे निरन्तर दुःख देने की प्रकृया जारी रखता है । तब क्या बुढ़े माता पिता को यह सब देख खुशी होती है ? क्या उनकी आत्मा ऐसे बेइमान, अन्यायी संतान को दुआ देती है ?

क्या यह सत्य नही कि कमजोर और अन्याय में पडे संतान के लिए माता पिता, अन्याय हेतु हृदय से दुआए देते हैं ? उनकी आत्मा परमात्मा से न्याय हेतु प्रार्थना करती है ? यह परमसत्य है - ईश्वर के घर में देर है, अंधेर नहीं । "न्याय एक दिन अवश्य आता है ।"

रामायण में वर्णित "बाल-सुग्रीव" पौराणिक कथा इसका उदाहरण है । आज के युग में जहाँ अनेक देश मिलकर साथ-साथ काम करने के लिए आगे वढ रहे हैं, जिसका उदाहरण हमारा SAARC दक्षिण एशियाली क्षेत्रीय सहयोग संगठन है । उस परिवेश में विखण्डन को सोचना, न तो सत्य हैं, न सम्भव हैं, न किसी के लिए लाभकारी । विखण्डन तो विनाश की ओर ले जाता है , और मिलन श्रृजन का संवाद देता है । विद्वानों द्वारा दिए गए विखण्डन सर्वनाम तो अन्याय और शोषण करने का एक हतकण्डा है । यस सत्य है कि राष्ट्र की मुलधारा में आने के लिए मधेशी आवाज में नेपाल माता का आगाध प्रेम प्रतिविम्बत है तथा ईश्वरीय प्रेरणा हैं ।

" मधेश" एक पुरानतम् सभ्यता, संस्कृति और इतिहास का नाम है । दुर्भाग्यवश आज इसके नाम का अस्तित्व भी खतरे में हैं ।

मधेशी के दयनीय हालात के लिए उत्तरदायी कौन ?

क्या मधेश की हालत गुलाम भारत जैसी है ? इस्ट इन्डिया कम्पनी भारत व्यापार करने आयी । व्यापार करते करते उसे गुलाम बनाया । इसी तरह से मधेश को पहाडे से मिलाया गया । नाम दिया गया "एकीकरण" । परन्तु धीरे-धीरे मधेशियों की हालत स्वतंत्र देश में गुलाम जैसी होती चली गयी ।

जब हम सुनते है एक लगभग तीस हजार बनियों के समूह ने (इस्ट इन्डिया कम्पनी के लोग) बीस करोड़ शक्तिशाली, बुद्धिमान और स्वतंत्रता प्रिय (उस समय भारत की आबादी) भारतीय लोगों (जिसमें शैन्यबल भी शामील था) को गुलाम बना लिया, तो अजूबा सा लगता है । परन्तु यह सत्य है और इसका रहस्य क्या हैं ? ये तथ्यांक बोलते हैं कि भारतीयों को अंग्रेजो ने गुलाम नहीं बनाया बल्कि वे स्वयं ही गुलाम बन गए । ऐसा प्रतित होता है जैसे हिन्दु नारियों को पति को परमेश्वर मानने के लिए न तो कानून कहता है, न समाज, न पति, बल्कि वह स्वयं पति को परमेश्वर मानकर समर्पित हो जाती है ।

आज मधेशियों के इस विगडेते हालात के लिए कौन उत्तरदायी है ? दूसरा नहीं बल्कि मधेशी स्वयं हैं । इसका क्या रहस्य है ? क्योंकि अपने मान सम्मान हक अधिकार की रक्षा करने की बजाय इन्हें दूसरे के हाथों गिरवी रखनेका संस्कार अपना लिये हैं ।

अपने ही देश में इन्हें न्यायिक सम्मान और अधिकार, सामाजिक न्याय और मानव अधिकार से बंचित किया गया है ।

यह कहना, एक सामान्य सत्य को प्रकट करना है कि प्रत्येक मधेशी की राष्ट्रिय आकांक्षाए होती है, दूसरे (गैर मधेशी नेपाली) इसे स्वीकार करे या नहीं । यह एक अलग तथ्य है कि बहुतरे गैर मधेशी नेपाली (सौ प्रतिशत नहीं) मधेशियों को भारतीय कहते हैं और भारतीय लोग तथा भारत की सरकार नेपाल के मधेशियों को नेपाली कहती है । फलस्वरुप ये पेण्डुलम की भांती झुलते रह जाते है, छुते दोनो किनारों को है - परन्तु अपने किसी के भी नहीं हो पाते हैं ।

लाखों गरीब, कमजोर, सीधे-साधे मधेशी जो इस धरती पर पैदा हुए, यहाँ की हवाओं, अन्न-जल को ग्रहण कर इस मिट्टी में खेलते कुदते बडे हुए, जिनके पूर्वज शदियों से इस धरती की सेवा करते आए, उन्हें नेपाली कहलाने के न्यायिक अधिकार से, नागरिक न मानकर, शदियों तक वंचित किया गया । जो लोग धनी, मजबूत हुए उन्हे तो नेपाली कहलाने का हक तो मिला, लेकिन देश-नेपाल की मूलधारा में आने से

रोक लगा दिया गया । इतनी बडी आबादी से उगली पर गिने जानेवाले दो-चार लोग देश की मूलधारा में प्रवेश पाए परन्तु उन्हें भी बहुत जल्दी ही किनारे लगा दिया गया । परिणामतः मधेशियों को पूर्णतः देश की मूलधारा से बाहर रखा गया ।

नेपाल में मुख्य रुप से दो वर्ग भौगोलिक बसोबास की दृष्टि से बसते हैं । भौगोलिक असमानता के साथ-साथ इनकी सभ्यता एवं संस्कृति तथा समाजिक रहन सहन में भी असमानता पायी जाती है । ये वर्ग है -पहाड़ी और मधेशी । यहाँ पहाड़ी मूल के लोगों के साथ समस्याएँ नहीं हैं । परन्तु, मधेशी मूल के लोगों के साथ समस्याएँ पहले भी थी और आज नयी-नयी समस्याएँ और आती जा रही हैं ।

सन् १८१३ के पूर्व मधेश छोटे छोटे कई स्वतंत्र राज्यों का समूह था । प्रजा/राज्य को अपनी स्वतंत्रता, अपनी सम्प्रभूता प्राप्त थी । गोरखाली राजाओ ने एकिकरण के समय सिर्फ जंगलो और खेतो का एकिकरण नही किया, बरन् वहाँ के जनसमूदाय का भी एकीकरण किया । यह भी इस बात का प्रमाण है कि मधेशी यहाँ के मूल निवासी हैं । समय के साथ कुछ घटनाएँ घटी होगी, जो स्वभाविक हैं । यह धरती मलेरिया और हैजा जैसे जानलेवा बीमारियो के आतंक से आतंकित रहा हैं । ऐसा हुआ जब महामारी ने गाँव के गाँव को उजाड़ डाला । उस हालात में लोग इस जगह को छोड़ कुछ दक्षिण के बीमारी रहित गांव में कुछ काल के लिए गए होंगे । ऐसे भी जीवों का एक जगह से दूसरी जगह जाना (migration) प्रकृती का नियम है ।

बल्कि यह कहना ज्यादा उचित होगा कि लोग कुछ दशक से पहाड़ों से उतर मधेशी जनजातियों को उनके जमीन से वेदखल कर, खुद हड़प रहे है । यह तो “उल्टा चोर कोतवाल को डाटे” वाली कहावत हो गयी ।

राष्ट्र निर्माता नें “चार जात छत्तिस वर्ण की फुलवारी” नेपाल को कहा । क्या उस फुलवारी का एक फुल मधेशी नहीं हैं ? यदि नहीं है तो वह किस फुलवारी का फुल हैं । यदि हैं तो उसके साथ ऐसा अपमानजनक व्यवहार क्यों ?

यह निर्विवाद हैं - मधेशी, नेपाल फुलवारी के मधेशी क्यारी का फूल है । क्यारी को क्यारी ही रहने दो । इसे बचन और कर्म से मानना ही सत्य है, धर्म है, कल्याणकारी हैं । अर्थात सरकार की नीति और कार्यान्वयन गति विधि न्याय से होने चाहिए । इसे मैं दूसरे मूल के लोग और सरकार के विरुद्ध नहीं कह रहा हूँ, बल्कि वर्तमान परिस्थित में मधेश और मधेशियों की उठती धर्म, सत्य और न्याय की आवाज को सुनते हुए सभी मूल के लोग के साथ प्रेम-बन्धुत्व, सदभावना और साकार के प्रति विश्वास और श्रद्धा को जगाने बढ़ाने की दिशा में प्रयास कर रहा हूँ ।

बदलते हालात में लोगों ने एक अलग परिभाषा कहना शुरु किया है । कहते हैं - जो मधेश में रहते है मधेशी । अर्थात वे इस संदेश को देते है कि जो पहाड़ी पहाड़ से उतरकर मधेश में बसोवास करने लगे वे मधेशी हैं । अजीबो गरीब स्थिति का सृजन हो रहा हैं । जो हाल में पहाड़ी मूल के लोग पहाड़ से उत्तर कर मधेश में आए मधेशी हो गए । उनका अधिकार हो गया वहाँ की जमीन, हवा, पानी पर । क्योकी सरकार उनके साथ है । जो मधेशी शदियो से यहाँ है । वे पैदा हुए, उनका घर है, पर इस जमीन पर न्यायिक अधिकार नहीं है । उन्हे अपमान स्वरुप भारतीय कहा जाता है ।

मधेशी पहाड़ में जाते है नौकरी करने के लिए, व्यापार करने के लिए । काम पूरा होता है, वापस लौट आते हैं । पहाड़ी मधेश में आते है नौकरी और व्यापार करने के लिए । वे नौकरी और व्यापार के साथ साथ आपार धन कमाते है, राज करते है और गुलाम बना देते हैं मूल मधेशियों को । क्योकि सरकार उनके साथ है । वे न्याय और धर्म का साथ नहीं देते है जो मधेशियों के पक्ष में हैं । मधेशियों के हित का गला घोटकर वे अपने लोगों के पक्ष में अन्याय और अधर्म का साथ देते हैं ।

इस स्थिति में मुझे एक न्यायपूर्ण धर्म संगत तथ्य याद आता हैं -“ इस्ट इन्डिया कम्पनी जब भारत आयी, हजारों अंग्रेज आए । गुलाम भारत में भी वे रहे । शदियों तक भारत कि भूमि पर अंग्रेजों की पीढी दर पीढ़ी बच्चे पैदा हुए, युवा भी हुए । क्या वे कभी भारतीय हुए ? यही

स्थिति अफ्रिका में रहनेवाले अंग्रेज के साथ भी हुयी । उनके पूर्वज अंग्रेज थे, वे अंग्रेज हैं कभी अफ्रिकी नहीं हुए ।"

मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि मेरा ऐसा विचार नहीं है कि मधेश में बसनेवाले पहाड़ी मूल के लोग वहाँ न बसे । मेरा विचार है "हमारी पृथ्वी सबका साझा है । सब मिलजुलकर बसे । मेरा कहना सिर्फ इतना है वे सत्ता का सहारा लेकर अपने बेहतर जीवन के लिए मूल मधेशियों को मौत की ओर न धकेले । वे उनका शोषण न करें । मधेशियों के साथ न्याय हो । देश की मूलधारा में न्यायिक रुप से उनको अधिकार और प्रतिनिधित्व मिले, साथ ही पहाडÞी मूल के लोगो के साथ अन्याय भी न हो । "

जमीन पर बडÞी बेमेल बात देखने को मिलती है । इनके साझेदारी का रहना तो भेडÞ और भेडिÞये की दोस्ती जैसी लगती है । मधेशियों से जितना लाभ मिल सकता है वह तो उठा लेना चाहता हैं परन्तु यह नहीं चाहते कि मधेशियों को तिल भर भी लाभ हो । हजारों-हजार मधेशियों का प्रतिनिधित्व का चुनाव भी ये पहाडÞी मूल के लोग चालाकी से जीत लेते है । बेचारे मधेशी भी क्या करते, वे अपनी आत्मा को मारकर, जीवन से भयभीत होकर उन्हें अपना मत दे देते हैं कहते है "सत्ता प्रशासन उनके साथ है । मधेशी मूल के नेता हमारा काम करा नहीं पायेगें क्योंकि पहाड़ी अफसर विभाग मंत्रालय में बेठे है उनकी बात नहीं मानेगे । साथ में चुनावी दौरे में पहाड़ी मूल के नेता लम्बी चौडÞी आश्वानो/ प्रलोभनों का जाल फैला देते है । सीधे साधे बेहतर जीवन के आस में बैठे मधेशी झुठे आश्वासनों पर विश्वास कर लेते हैं और अंत में उन्हे मिलता कुछ भी नहीं हैं। अधिकांशतः ऐसा देखा गया ये नेता प्रतिनिधि होते है मधेशी जन समुदाय का, मधेश की धरती का । लेकिन विकास में सहयोग वे मधेश की धरती और लोगो का नहीं करते । इसका प्रमाण मधेश की धरती और लोगो का पिछडÞापन स्वयं चिल्लाकर दे रहा है ।

प्रजातंत्र के लिए लडÞनेवाले कांग्रेस प्रमुख नेता एवं पूर्वप्रधानमंत्री

कृष्ण प्रसाद भट्टराई, जो पहाड़ी मूल के है, पहाड़ में चुनाव हार गए, जब कांग्रेस की विजय धारा बह रही थी । वे एक नहीं , कई बार, पहाड़ में चुनाव हारे । अंत में विजय का सेहरा मधेश की धरती और मधेशी लोग ही पहनाए । अब वे जाने उन्होंने इस उपकार स्वरुप मधेश और मधेशियों के प्रति अपने कर्तव्य का पालना कैसे किया है ।

आज नेपाल में अनेको टेलीभिजन चैनल कार्यरत हैं । इन चैनलो के शत प्रतिशत समय आधी आबादी के ही इर्द गिर्द ही समेटे रहते है । यो कहिए इन सब पर आधी आबादी की तस्वीर ही दीखती है । बाकी आधी जनसंख्या गौण है । क्या आपके दिल में यह भावना नहीं उठती कि मधेशी तस्वीर क्यों नहीं दुनिया के सामने ? क्या आपका दिमाग नहीं चाहता कि मधेशियों का भी तस्वीर पर्दे पर झलके ? या दिल भावना शून्य और दिमाग चेतना रहित बन गया है । कई बार लोगों को कहते सुना गया "मधेशी मुर्दा होते है" । लेकिन इसमें इनका क्या दोष ? यह दोष है इनकी भावनाओं और विचारों पर शदियों से होते रहे गुप्त प्रहार की । ऐसी मार जिसे खाकर आंखे न आंसू बहा सके और जुबान न आवाज निकाल सके । चुपचाप भीतर की मार भीतर ही सहता चला जाय ।

यहाँ से छपनेवाले सभी दैनिक समाचार पत्रों को देखे, साप्ताहिक पत्रों तथा मासिक पत्रिकाओं को देखे - वे ही नाम, वेही तस्वीरे, उनकी ही बातें, उनके ही काम । आधे तो चुपचाप गुमनाम रेडियो सुने । आधे सब । आधे साफ । इस संबंध मे मै कहना चाहना हूँ :

- ✯ दुसरे का भाग (हिस्सा) छिनना, दुसरे का अधिकार हडपना : क्रान्ति का बीजारोपण करना है । यह क्रान्ति एक दिन छिनने और हडÞपनेवाले का जीना हराम कर देती है ।
- ✯ संत-महात्मा कहते है चालाक चालाकी से, कमजोर और सिधे साधे लोगो का धन और अधिकार छिनकर कुछ समय के लिए धनवान और सम्मानित (प्रतिष्ठित) बन जाते है, परन्तु धीरे धीरे यह पाप उनका सर्वनाश कर डालता है ।

★ सौ दिन चोर का तो एक दिन थानेदार का,
सौ दिन शैतान का तो एक दिन भगवान का,
सौ दिन अत्याचारी-जालिम का तो एक दिन मजरुम का ।

नेपाल के पहाड़ी, मधेशी, हिन्दु, मुसलमान, बौद्ध, ईसाई आदि एक ही ईश्वर की संतान है । इसलिए हम सब सगे भाई बहन हैं । सबसे पहले हम सब नेपाली हैं, उसके बाद मधेशी, पहाड़ी, हिन्दु, मुसलमान, बौद्ध, ईसाई आदि । जब तक हम इन छोटे छोटे संकुचित विचारों और सीमाओं से उपर उठकर और बाहर निकलकर केवल शुद्ध नेपाली नहीं बनेंगे तबतक प्रजातंत्र को सुस्थिर, सुदृढ और चिरंजीवी नहीं बना सकेंगे ।

रुस ट्रांसवाल और नेपाल

रुस में जारशाहों के अत्याचार

रुस में धनी गरीब के बीच की दूरी बहुत लंबी हो गयी थी । गरीब ऐसे जिन्हें खाने को सुखी रोटी भी प्राप्त न थी । अमीर ऐसे जिनके कुत्तों के जुठे अन्न गरीब खा कर अपनी भुख मिटाने को मजबूर होते । गरीबों के बढÞते दुखों के कारण वहाँ अराजकतावादी काफी संख्या में उत्पन्न हो गए । लोग अपने उपर होने वाले जुल्म के प्रतिकार में हिंसात्मक क्रांति पर उतर आए । बडÞे, छोटे, स्त्री पुरुष सबों ने साहस और बलिदान का परिचय दिया । लियो टाल्स्टाय, जो रुसी निवासी, पाश्चात दुनिया के एक महान लेखक और अत्यन्त स्पष्ट विचारक थे । उन्होने ७।१९।१९१० को गांधीजी के नाम एक पत्र लिखा था, जिसमें उन दिनों रुस में हो रहे घटनाओं का संक्षिप्त विवरण दिया हैं ।

मो.क. गांधी
ट्रासवाल

कठोरता से कोमलता का, दर्प तथा हिंसा से विनम्रता व प्रेम का ठीक वही संघर्ष यहां हमारे बीच भी प्रति बर्ष अधिकाधिक जोर पकड़ता जा रहा है । यह जोर धार्मिक आदेश और दुनियाबी कानुनो में चलनेवाले एक तीब्रतम बिरोध के रुप में अर्थात सैनिक सेवा से इंकार करनेके रुप में खास तौर से दिखलाई पडÞता है । सैनिक सेवा से इनकार करने की घटनाओ की संख्या रोज बढÞती जा रही है ।

मेरी राय में पुनर्जन्म में बिश्वास कभी भी उतना दृढÞ नही हो सकता जितना की आत्मा की अमरता तथा ईश्वर के न्याय व प्रेम में ।

मै भातृ भाव से आपको अभिनन्दन करता हुँ और आपके साथ पत्र व्यबहार होने की खुशी हैं ।

– लियो टाल्स्टाय

इतिहास साक्षी है इस महान संघर्ष के बावजुद भी रुस जारशाहों के अत्याचार से तत्काल मुक्त नहीं हुआ । गांधीजी के विचार अनुसार इसका केवल यही कारण था कि स्वदेशाभिमान गलत मार्ग पर भटककर खूरेजी पर उतर आया । ईश्वरीय नियम के अनुसार विचार करें तो, इससे हिंसा से लोगों को तुरंत लाभ नहीं मिल सकता ।

नेपाल में माओवादी आन्दोलन रुकुम, रोल्पा से प्रारम्भ हुआ था, हो सकता है (सम्भवतः) वहाँ स्थानीय धनियोंद्वारा गरीबों का शोषण अत्यधिक हुआ । शायद वहाँ के गरीबों को गरीबी और शोषण की मार ने मरने और मारने के संकल्प के लिए वाध्य किया । आज यह लहर सारे देश में फैल गयी । जो पहाडÞो से शुरु हुयी और छोटे ही समय में तराई के गावों तक पहुँच गयी । आज भी अक्सरहा तराई से संघर्ष, हत्या आदि की खबरें आती रहती हैं ।

अत्याचार का प्रतिकार

दक्षिण अफ्रिका में प्रवासी भारतीयों के साथ हो रहे अत्याचार के खिलाफ गांधी का संघर्ष जग जाहिर है । उस समय अफ्रिकी सरकार ने एक कानून बनाए थे - "पंजीयन कानून" । यह कानून प्रवासी भारतीयों के शोषण का कानून था । गांधीजी ने इस शोषण के विरुद्ध, दक्षिण अफ्रीका के ट्रांसवाल के भारतीयों को पंजीयन कानून का विरोध करने के लिए एक जुट किया । विरोध (संघर्ष) का रास्ता भी बताए । उन्हीं दिनों गांधी संघर्ष-समूह के एक स्पष्ट विचारक "ईसप मियां ने रुसी जनता पर जारशाहों के अत्याचार तथा दक्षिण अफ्रीका (ट्रांसवाल) में भारतीय लोगो पर अंग्रेजी शासन के अत्याचार की तुलना की थी । ये सब इंडियन ओपीनियन नामक समाचार पत्र में छपे थे जो निम्न लिखित है :

श्री ईसप मियां ने ट्रांसवाल के अंग्रेजी राज्य की स्थिति का रुस की स्थिति के साथ मिलान किया है । यह तुलना करने लायक है । जिस तरह इस में लोगों पर राज्याधिकारी जुल्म करते हैं, उसी तरह ट्रांसवाल में भारतीय प्रजा पर राज्याधिकारी जुल्म करते हैं । रुस में लोगों के खून होते है व लोगों पर खुलेआम हमला होता है । ब्रिटिश राज्य में लोगों के दुःख यद्यपि चूहे के काटने की तरह तत्काल जाहिर नहीं होते, फिर भी परिणाम वैसे ही खराब कहे जा सकते हैं, ... ।

रुसी लोगों की यह मान्यता है कि राज्य करनेवाले सब अत्याचारी होते हैं, इसलिए राज्यसत्ता को नष्ट कर देना चाहिए । इस के लिए रुस के लोग छिपी और खुली रीति से राज्याधिकारियों की हत्या कर डालते हैं । ऐसा करना उनकी भूल हैं । ... ... ।

छोटी उम्र की लड़कियां भी ऐसा साहस करती हैं । अभी-अभी एक पुस्तक प्रकाशित हुई हैं । उस में जो बालाएं अमर हो गई हैं उनके जीवन-चरित्र दिए गए हैं । ऐसी लड़कियाँ, मरना तो है ही, ऐसा समझकर मरने की तैयारी करती हैं और अपने मन में देशभक्ति रखकर सम्पूर्ण बलिदान का संकल्प करके, जिसे देश का शत्रु मानती हैं, उसकी हत्या कर डालती हैं, और बाद में यातनाएँ भोगती हुई अधिकारियों के हाथों मृत्यु प्राप्त करती हैं । वे ऐसी जोखिम उठाकर देश की सेवा करती हैं । इस में उनका तनिक-सा भी स्वार्थ नहीं रहता । ...

हमारे लिए प्राणघातक साहस करने की जरुरत नहीं रही । किन्तु अपने शरीर को कष्ट देने की जरुरत है । उसका सर्वोत्तम उदाहरण ट्रांसवाल का नया कायदा है । ...

लोग पंजीयन नहीं करायेंगे, जुर्माना भी नहीं देंगे, बल्कि जेल जायेंगे । हम मानते हैं कि यदि ट्रांसवाल में भारतीय इस निश्चय पर अटल रहें, तो उनके बन्धन तुरन्त कट जायेंगे । जेल उनके लिए महल बन जायेगी । उससे बेइज्जती होने के बजाय उनकी आबरु बढ़ेगी । और सरकार को मालूम हो जायेगा कि भारतीय प्रजा का अपमान हमेशा ही निर्भय रहकर नहीं किया जा सकता । अर्जी देने के बाद जो हमें करना

चाहिए और जिसे हम नहीं करते सो यह है, कि हम अपने शरीर सुख का त्याग नहीं करते । हम अपने मौज-शौक में डुबे रहकर उसे छोड़ नहीं सकते । दूसरों के लिए अपने सुख का बलिदान करना हमारा कर्तव्य है । इसी में सच्ची खुबी है, इसी में खुदा राजी हैं और इसी से हमारा सच्चा कर्तव्य पूरा होता हैं ।

"ईडियन ओपीनियन" ८/९/१९०६

गांधीजी ने इस लेख में रुस और दक्षिण अफ्रिका में लोगों के जुल्म, अत्याचार का प्रतिकार करने के तरीकों का वर्णन किया है तथा स्वदेशाभिमान के लिए व्यक्तिगत सुख त्याग की अपील की हैं।

रुस के जन संघर्ष के परिणाम को देखते हुए गांधीजी दक्षिण अफ्रिका (ट्रान्सवास) के भारतीयों को पंजीयन कानून के विरोध के लिए अहिंसक मार्ग बताये ।

अंततः गांधीजी के बताये अहिंसक शक्ति से ट्रांसवाल के पंजीयन कानून की समाप्ति हो गयी ।

अर्थ और विज्ञान-युग में मानवतावाद

बर्तमान युग को विज्ञान युग के साथ साथ अर्थ युग के नाम से भी जाना जाता है । यथार्थ में अर्थ युग ही ज्यादा प्रभावशाली बन गया है । क्योकि विज्ञान का उपयोग अर्थ अर्जन में बहुत ज्यादा हो रहा हैं, जनहित में कम । यहाँ तक कि जन सेवा का श्रोत माने जाने वाले चिकित्सा क्षेत्र में भी विज्ञान की उपलब्धि को सामान्य जन के कल्याण हेतु कम, कुछ लोगो के लिए अर्थ अर्जन हेतु विशेषकर किया जा रहा है । जो कहने में जनहित है, परन्तु कर्म-व्यवहार में जन शोषण और स्वहित है । इस युग में भी गांधीजी ने अपने मन, बचन और कर्म से, "जनहित में जीवन" का सत्य आर्दश उदाहरण के रुप मे प्रस्तुत किया है । उन्होने राजनीति की मानवता के लिए, वकालत की मानवता के लिए ।

जब वे पहली बार दक्षिण अफ्रिका गए, प्रवासी भारतीय उद्योगपति व्यवसायी के एक मुकदमे की वकालत के लिए, तब नही कह सकता उनके मन में अर्थ अर्जन के विचार थे या नहीं । लेकिन दक्षिण अफ्रिका में भारतीयों की स्थिति देखने के बाद, पाँच हजार पौण्ड सालाना आमदनी में बितानेवाले आरामदायी जीवन को छोडÞ, आम प्रवासी भारतीय जैसा जिनकी आय लगभग तीन सौ पौण्ड सालाना होती थी, सामान्य कठिनाईपूर्ण (उनके लिए तपपूर्ण) जीवन सहर्ष, बीताने लगे । बिलायत से बैरिस्टर बने, टाई सूट में रहने वाले गांधीजी गरीब से गरीब भारतीय जैसा सिर्फ एक धोती के आधे भाग को कमर के नीचे बाँधते और आधे भाग से कमर के उपर ओढÞते थे । दूसरे शब्दो में उनको वस्त्र की आवश्यकता बौद्ध भिक्षुओं से भी कम होती । आर्थिक दृष्टिकोण से समृद्ध, सम्पन्न तथा प्रतिष्ठित परिवार में जन्मे पले गांधीजी आश्रम में (साबरमती आश्रम) अपना जीवन विताये, मानवता के लिए । उनका

भोजन स्वादिष्ट नही वरन् स्वास्थ्यकर होता था । दूसरे शब्दों में, वे जीभ के नहीं वरन जीवन के लिए खाते थे ।

प्रकृति ने जीवन के लिए जो सबसे ज्यादा अनिवार्य है-हवा, उसे मुफ्त (बिना पैसा, बिना परिश्रम के) प्रशस्त प्रदान किया है । हवा के पश्चात जल की आवश्यक्ता है । जल भी थोडे परिश्रम और थोडे पैसे से उपलब्ध हो जाता है । जल के बाद अन्न (भोजन), जो स्वास्थ्यकर हो, जीवन के लिए हो, कम पैसे में उपलब्ध होता है । ज्यादा पैसे खर्च होते हैं, जीवन नहीं, जीभ के लिए । लम्बी आयु और स्वस्थ जीवन के लिए शाकाहार, जो सस्ता है, मांसाहार की अपेक्षा ज्यादा जीवनदायिनी है । शराब, सिगरेट जो जीवन नाशक है, ज्यादा मँहगा भी हैं । ऐसा देखने से लगता है मानव निर्मित समस्यायें ही ज्यादा हैं । प्रकृति तो जीवन का संदेश और जीवन साधन अपने आप में बटोरे हुए हैं ।

आज राजनीति में हिंसा प्रधान अस्त्र के रुप में मौजुद है । देश में एक देशवासी दूसरे के साथ, विश्व में एक देश दूसरे देश पर अधिकार जमाने के लिए हिंसा को अपनाने में लगे हैं । महत्वाकांक्षी राजनीतिज्ञों को छोड़, क्या दुनिया की जनता हिंसा चाहती हैं, या शांति ? अफगानिस्तान और इराक पर हुए अमेरिकी हमले के समय, विश्व के कोने कोने में हिंसा के विरुद्ध प्रदर्शन हुए । यहाँ तक कि अमेरिका में भी हमला और हिंसा के विरुद्ध में जनमत सड़क पर आ गए । हिंसा नहीं, अहिंसा-शांति की चाह, आज आमजनता के मन में है । हिंसा जहाँ मानवता को विनाश की ओर धकेलती है, वहीं अहिंसा मानवता को सृजन और विकास की ओर आगे बढाती हैं ।

गांधीजी राजनीति में भी मानवतावादी थे । इसीलिए हमने उनके अहिंसा और सत्य के मार्ग को चुनना उपयुक्त समझा है । मानवतावादी, राजनीति, संत नेता गांधी के सम्बन्ध मे वैज्ञानिक युग के कुछ वैज्ञानिको, राजनीतिज्ञों और विचारको के विचार प्रस्तुत हैं । शायद यह नेपाली युवको को नव नेपाल बनाने, पुनः शांति स्थापना करने तथा नेपाली को सुख समृद्धि के पथ पर आगे बढाने के लिए उत्प्रेरक सिद्ध हो -

"गांधीजी ऐसे राजनीतिज्ञ थे, जिसकी सफलता न चालाकी पर आधारित थी और न किसी शिल्पिक उपायों के ज्ञान पर, बल्कि मात्र उनके व्यक्तित्व की दूसरों को कायल कर देने की शक्ति पर ही आधारित थी । वे एक ऐसे विजयी योद्धा थे, जिसने बल प्रयोग का सदा उपहास किया । वे एक ऐसे व्यक्ति थे, जिसने यूरोप की पाशविकता का सामना सामान्य मानवीय यत्न के साथ किया और इस प्रकार सदा के लिए सब से ऊँचे उठ गए । आनेवाली पीढियाँ शायद मुश्किल से ही यह विश्वास कर सकेंगी कि गांधीजी जैसा हाड़ मांस का पुतला कभी इस धरती पर चला होगा ।"

- अबलर्ट आइन्सटीन

"महात्मा गांधी वर्तमान विश्व के सब से महान् व्यक्तियों में से एक थे । वे घोर तपश्चर्या का जीवन व्यतीत करते थे और उनके करोड़ो देशवासी उन्हें दैवी प्रेरणा-प्राप्त संत मानते थे । वे भारतीय जनता की स्वतन्त्रता की इच्छा के प्रतीक बन गये, तो भी वे कोरे राष्ट्रवादी ही नहीं थे । उनका सबसे प्रमुख सिद्धान्त अहिंसा का था । जो हिंसा द्वारा अपना लक्ष्य-साधन करने की कोशिश करते थे, वे उनका विरोध करते थे ।"

- क्लीमेंट एटली

"लेनिन और महात्मा गांधी को मैं विश्व में बीसवीं शताब्दी के सब से महान् व्यक्तित्व मानता हुँ, यद्यपि दोनों एक दुसरे के एकदम विपरीत हैं । इन दोनों में गांधीजी वास्तव में अत्यधिक प्रभावित करनेवाले महापुरुष हैं । महात्मा जी स्पष्ट शब्दों में कहते थे, "भारत छोड़ो" योजना मे अंग्रेजों के प्रति तनिक भी घृणा का भाव नहीं । यदि हम उन से डरते हैं तो घृणा की भावना उत्पन्न होती हैं, यदि भय के भाव की लोप हो जाती है तो घृणा का कहीं अस्तित्व ही नहीं रहता । प्रायः सभी प्रमुख ब्रिटिश नेताओं ने इस बात को स्वीकार किया है कि महात्मा जी सा प्रभावशाली अन्य कोई नहीं ।"

- रेजिनाल्ड सोरेन्सन

"गांधीजी का दृष्टिकोण मूलतः मानवतावादी और व्यावहारिक था । दूसरे शब्दों में वे मानव जीवन और मुनष्य के सुख के अभिलाषी थे और विज्ञान या अर्थशास्त्र या राजनीति जैसे मानव स्पन्दन रहित माने जानेवाले विषयों में उनकी कोई दिलचस्पी नहीं थी ।"

– सी.बी. रमण

"मेरी इच्छा है कि भारत से हजारों मील दूर स्थित अमेरिका निवासियों पर गांधीजी की मृत्यु से जो प्रतिक्रिया हुई उसे भारतवासी जानें । यह साधारण मृत्यु नहीं है । गांधीजी शान्ति की प्रतिमूर्ति थे और उन्होंने अपना सारा जीवन अपने देश की जनता की सेवा के लिए लगा दिया था । मेरे दस वर्ष के छोटे बच्चे की आंखो में आँसू छलकने लगे और उसने कहा, "मैं चाहता हूँ कि यदि बन्दूक बनाने का आविष्कार ही न हुआ होता तो बड़ा अच्छा था ।"

मैं उनकी मृत्यु के एक घंटे बाद सड़क से होकर कहीं जा रही थी कि एकाएक एक किसान ने मुझे रोका और पुछा, "संसार का प्रत्येक व्यक्ति सोचता था कि गांधीजी एक उत्तम व्यक्ति थे तो लोगों ने उन्हें मार क्यों डाला ?"

मैंने अपना सिर धुना और कुछ बोल न सकी । उसने संकेत से कहा, "जिस तरह लोगों ने महात्मा ईसा को मारा था उसी तरह लोगों ने महात्मा गांधी को मार डाला ।"

आज अपने देश (अमेरिका) के अति उन्नत सैनिकीकरण के मध्य हमारी दृष्टि गांधीजी की ओर जाती है और यह प्रतीत होता है कि (युद्ध का नहीं, बल्कि शान्ति का) उनका मार्ग ही ठीक है ।"

– पर्लबक

वह जहां बैठते थे, वह मंदिर बन जाता था । वह जहां चलते थे वह भूमि पवित्र हो जाती थी ।

– पंडित जवाहरलाल नेहरु

गांधीजी के मानव प्रेम से तो हम अत्यधिक प्रभावित थे । जब मेरे भानजे प्रिंस दिलिप की प्रिंसेस एलिजाबेथ (ईगलैन्ड की साम्राज्ञी) से सगाई हुई, तो सब से पहले बधाई का पत्र उन्ही से मिला । उन्होंने कहा कि मैं कुछ उपहार देना चाहता हूँ, लेकिन मेरे पास अपना कहने को कुछ भी नहीं है, ऐसी हालत में मैं क्या भेज सकता हूँ, मैं नहीं जानता । मेरी पत्नी और मेरे साथ विचार करने के बाद उन्हों ने हाथ से सुत काटकर एक छोटा सा मेजपोश बनवाया और उसे उन्हों ने मेरे द्वारा साम्राज्ञी को भेजा । आज भी वह मेजपोश साम्राज्ञी के पास अमूल्य निधि के रूप में सुरक्षित हैं ।

सारा संसार उनके जीवित रहने से सम्पन्न था और उनके निधन से वह दरिद्र हो गया है ।

– माउंत बेटन

अहिंसक शक्ति

शक्ति सें शक्ति का प्रतिकार

"सैन्य शक्ति का प्रतिकार सैन्य शक्ति ही कर सकती है। हिंसा का बदला हिंसा। सैन्य शक्ति के आधार पर ही शासक सत्ता पर स्थापित होता है तथा शासन करता हैं।" इस सिद्धान्त पर विश्वास करते हुए माओवादी समूह आमजनता की सैन्य शक्ति बनाकर, राष्ट्र सैन्यबल का प्रतिकार किये। इस प्रतिकार के दौरान, राष्ट्र जो सबका साझा है, और जनता जो राष्ट्र की संतान है, काफी क्षति भोगी।

" शक्ति का प्रतिकार शक्ति से होता है" इसमे मेरा विश्वास है, लेकिन "सैन्य शक्ति का प्रतिकार सिर्फ सैन्य शक्ति से होता है " इसमे न तो मेरा विश्वास है और न मेरी श्रद्धा। "अन्याय का सहन हो" इसका पक्षधर मैं नहीं हूँ। मेरे विचार में अन्याय का प्रतिकार अवश्य हो, अन्यायी सैन्य शक्ति का भी प्रतिकार अवश्य होना चाहिए, लेकिन हिंसात्मक सैन्य शक्ति से नहीं, वरन् अहिंसक शक्ति से। सैनिकों के हिंसात्मक कारवाई, इनके विजयी कारनामें, मानवता पर ढाहे गए कहर से विश्व ईतिहास भरा पडÞा है। इसके साथ-साथ अहिंसा के शक्ति का सैन्य शक्ति पर विजय, विश्व मानव कल्याण के लिए एक नया कर्मपथ, जीवन के अध्यात्मिक उद्देश्य की प्राप्ति के उदाहरण भी विश्व इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में अंकित हैं। मनुष्य को स्वाभाविक रुप से अहंकार, ईर्ष्या, हिंसा की शक्ति, हिंसा की आकांक्षा प्राप्त होती है, लेकिन क्षमा, प्रेम और अहिंसा की शक्ति, अहिंसा की आकंक्षा सभी मनुष्यों को आसानी से प्राप्त नहीं होती। ये मनुष्य के श्रेष्ठ गुणों में हैं।

गांधीजी के नेतृत्व में दक्षिण अफ्रिकी सरकार के सैन्य शक्ति का प्रतिकार वहाँ के कुछ हजार भारतीयों ने अहिंसक शक्ति से ही किया और

अंततः सरकार के अन्यायपूर्ण कानून पर विजयी रहे। अंग्रेजो का विशाल सैन्य शक्ति गांधीजी के नेतृत्व में भारतीयो के अहिंसात्मक सत्याग्रह के समक्ष न टीक सका और अंततः भारत से अंग्रेजी सत्ता का अंत हो गया। नार्वे जैसे राष्ट्र ने भी अपने नाजी अधिकारियों का प्रतिकार गांधीजी के सिद्धान्त के आधार पर ही किया और सफल रहे। अफ्रिकी अश्वेत नेता नेल्सन मंडेला गांधीवादी अहिंसक शक्ति से ही श्वेत अधिकारियों का प्रतिकार कर विश्व प्रसिद्ध हुए हैं।

अहिंसक शक्ति के महान प्रयोगकर्ता गांधीजी के संवंधमें उनके समकक्ष व्यक्तियों के विचार लिपि बद्ध किए गए हैं। कुछ वाक्य खण्डो को हम इस आशा से आगे वर्णन करते हैं कि विश्व के लड़ाकू भाई बहन तथा नीति निर्देश देनेवालों का मार्गदर्शन हो सके -

कुमारी क्यूरियल लस्टर के शब्दो में :

इस शताब्दी के शुरू में मैं अहिंसा की भक्त बन गई। साम्राज्य के लिए और युद्धकालीन वीरता के प्रति मेरा गर्व टॉल्स्टॉय की पुस्तक 'तेइस कहानियाँ' पढ़ने से चूर-चूर हो गया, जिस में रुसी ग्राम-जीवन में ईसा के 'गिरि-प्रवचन' का चित्रण किया गया था।

मैं गांधीजी के उस पत्र का जिक्र करुंगी जो उन्हों ने मुझे यरवदा जेल से लिखा था। यह पत्र हाथ के बने कागज के छोटे से टुकड़े पर लिखा गया और हमारी कुटिया में प्रमुख स्थान पर लगा हुआ है। उस पर जांचकर्ता के हस्ताक्षर और गवर्नर की मुहर लगी हैं। वह इस प्रकार हैं - "प्रिय क्यूरियल, आगामी कष्ट सहन में तुम से सम्पर्क रखने की दृष्टि से ये पंक्तियां लिख रहा हूँ। यह पत्र तुम्हारे हाथों में उस समय होगा, जब मेरे अनशन का आधा समय गुजर चुकेगा। इसके महत्व नहीं, जब आत्मा का आत्मा से वार्तालाप होता हैं। उसमें प्रार्थना और प्राप्ति साथ-साथ होती है।" **तुम्हारा - बापू।**

अगाथा हैरिसन के शब्दो में :

अक्टुवर १९३१ में मैं महात्मा जी से लंदन में मिली। लंदन से

विदा होने के पूर्व गांधीजी ने 'हमारे अन्य देशों के बीच पारस्परिक सद्‌भाव निर्माण करने का कार्य' हम में से कुछ व्यक्तियों को सौंपा। इस कार्य में हमलोगों का पथ-प्रदर्शन करने के लिए जब मैंने उन से कहा, तब वे बोले, "प्रभु ही आप को रास्ता दिखावेंगे।"

दिल्ली और शिमला में उनके सहवास में बिताये हुए इन चंद सप्ताहों की अवधि में वर्तमान व भविष्य के संबन्ध में उनके साथ चर्चा करने का मुझे और एक अवसर मिला। दिल्ली से अपने हवाई जहाज के छूटने के ठीक पहले मैं उनसे आज्ञा लेने गई। तब उन्हों ने लगभग वही शब्द दुहराए जो कि पन्द्रह वर्ष पूर्व कहे थे। अर्थात् "भगवान तुम्हारा पथ-प्रदर्शन करेंगे।"

छः हजार मील दूरी पर स्थित हमलोगों का ध्यान अहिंसाशास्त्र-विषयक उनके अंतिम प्रयोग की ओर लगा हुआ है। "आध्यात्मिक जागृति का एक ऐसा प्रयास जिस के समतुल्य उदाहरण इतिहास में कम ही मिलेंगे।" इन शब्दों में एक समाचारपत्र ने इसका वर्णन किया है। श्री रामपुर से मेरे नाम भेजे हुए अपने एक पत्र में वे लिखते हैं : "यहाँ बंगाल के एक दुर्गम भाग में मैं हूँ और अपने जीवनोद्देश्य के अत्यंत कठिन अंश को मैंने उठाया है। यदि यहाँ के अपने कार्य में मैं सफल रहा तो आगे के कार्य-योग्य भी बन जाऊंगा।"

मादेलीन रोलांके शब्दो में :

सन् १९३१ ई में, लन्दन की गोलमेज-परिषद में भाग लेकर लौटती बेर, गांधीजी ने मेरे भाई की जो मुलाकात ली, (विल्लन्येव स्वीटजरलैंड में), उसे मैं अपने जीवन की एक बहुमूल्य स्मृति मानती हूँ। एक दिन मेरे भाई गांधीजी को यूरोप की शोचनीय स्थिति का वर्णन सुनाते हैं। कहते हैं, तानाशाहों के पैरों तले कुचले जानेवाले लोगों की दशा बड़ी ही दयनीय है। गुमनाम और बेरहम पूंजीवाद की जंजीरे तोड़ डालने के लिए सर्वहारा वर्ग ने अपने प्राणों की बाजी लगा दी हैं, और

न्याय एवं स्वाधीनता की भावनाओं से प्रेरित इस वर्ग के लिए अब हिंसा और विद्रोह का सहारा लेने के अलावा अन्य कोई चारा ही नहीं रहा है। स्वभाव, शिक्षा-दीक्षा एवं परम्परा आदि सभी दृष्टियों से पश्चिम की जनता अभी अहिंसा-धर्म के आचरण योग्य नहीं बनी हैं। .... " सुनकर गांधीजी विचार मग्न हो जाते हैं।

किन्तु, उत्तर देते समय, अहिंसक शक्तिके प्रति अपनी अटल श्रद्धाका वे पुनरुच्चार करते हैं।

गुरुवार ता. १८ दिसम्बर को विक्टोरिया हॉल के विशाल एम्फी थियेटर में गांधीजी के भाषण सुनने के लिए लोगों की विशाल भीड उपस्थित होती हैं। इन में पूंजीवादी, शस्त्रवादी आदि वर्ग के लोग आए हैं। वे गांधी विरोधी हैं। किसी ने स्विट्जरलैंड जैसे तटस्थ राष्ट्र का उदाहरण पेश करते हुए पूछा, "अपने पर परराष्ट्र द्वारा आक्रमण किया जाने पर वह कौन सी नीति बरते ? क्या वह आत्मरक्षा न करे ? और अगर करनी हो तो, क्या इसके लिए सैन्यबल आवश्यक नहीं है ? "निश्चल किंतु निश्चयी स्वर में गांधीजी बोले- "सैन्यबल निरर्थक है। यहाँ के सभी नागरिक, याने स्त्री-पुरुष, बाल-बृद्ध आदि सभी यदि शत्रु के विरुद्ध अपनी देह की दिवार खड़ी कर दें तो वह काफी हैं। और अगर आक्रामक राष्ट्र इतना बर्बर बन गया कि इन सबों को मौत के घाट उतार दे, तो कम से कम इतनी मौत अवश्य ही सुफल देगी।"

दूसरा सवाल वर्ग-विग्रह के सम्बन्ध में था। इसके जबाव में गांधीजी बोले, "श्रमजीवी, खुद ही अपनी ताकत से अनजान हैं। अगर उन्हें इसका भान हो और वे जग पड़े तो पूंजीवाद की इमारत जरुर ही ढह जायेगी, क्यों कि संसार में एक मात्र श्रम ही शक्तिशील है।"

एडमंड प्रिवैट के शब्दों में :

गोलमेज-परिषद की समाप्ति के बाद गांधीजी स्विट्जरलैंड पहुंचे। वहाँ लोजेन और जिनेवा में हमने उनके व्याख्यानों का आयोजन किया। यहां एक वृद्ध ने उनसे पूछा, "क्या उस उपदेश को दोहराते समय, जो

कि आज से दो हजार वर्ष पूर्व ईसा मसीह संसार को दे गये एवं जिस की असफलता की साक्षी इतिहास दे रहा है, आप निराशा अनुभव नहीं करते ?"

इसका जो जबाब गांधीजी ने दिया वह जिन्दगी भर मैं भूल नहीं सकता ।

"कितने वर्ष बोले आप ?" अपनी स्वाभाविक मुस्कुराहट से गांधीजी ने पूछा ।

"मैंने कहा कि विगत बीस शताब्दियों से व्यर्थ ही इन बातों का प्रचार किया जा रहा है ।" वृद्ध ने, जो एक साम्यवादी था, जबाब दिया ।

"तो क्या बुराई का बदला भलाई चुकाने जैसी दूरुह बात सीखने के लिए दो हजार वर्ष की अवधि आपको बहुत अधिक मालूम होती हैं ?" गांधीजी का प्रत्युत्तर रहा ।

मानवजाति के इतिहास में अंकित गांधीजी के कार्यों द्वारा इतना तो अवश्य ही सिद्ध हो जायेगा कि कम-से-कम एक राष्ट्र ने उनके उपदेशों एवं अपनी आध्यात्मिक परम्परा के पुण्य-प्रभाव के बल पर स्वदेश की एक महान् मानवतावादी स्वाधीनता-प्राप्ति के लिए शान्ति का मार्ग ग्रहण किया । ऐसी घटना के बाद संसार का क्रम कदापि पूर्ववत् बना नहीं रह सकता । यहाँ तक कि नॉर्वे जैसे राष्ट्र ने भी अपने नाजी अधिकारियों का प्रतिकार करते समय गांधीजी से प्राप्त प्रेरणा का ही अवलंबन किया ।

बम्बई में आयोजित विराट् सार्वजनिक सभा में हमने मन ही मन इस भारतीय नेता की संयमशील वाणी की यूरोप के राष्ट्रीय नेताओं की विद्वेष फैलानेवाली पाशवीवाणी से तुलना की । गांधीजी लोगों को अहिंसा पालन सम्बन्धी प्रतिज्ञाओं की याद दिला रहे थे और कह रहे थे कि प्रत्येक भारतीय स्त्री, पुरुष, अंग्रेज अफसरों एवं उनके कुटुंबियों की जानमाल और आबरु की सतर्कतापूर्वक रक्षा करे, इतना ही नहीं, बल्कि मौका आ पड़ने पर इसके निमित्त अपने प्राण तक होमने के लिए तैयार रहें । "हम उनके विरुद्ध नहीं लड़ रहे हैं, हम लड़ रहे हैं उस शासन

प्रणाली के विरुद्ध, जो कि उनका उपयोग कर लेती है" वे बोले ।

एक बार अपने लोगों के बीच खड़े गांधीजी ने चंद शब्दों में भय की भावना पर, जो कि हिंसा का प्रधान शस्त्र है, प्रकाश डाला । बोले, "अपने धन या प्राणों की हानि के भय से मुक्त होते ही आप अपने विरोधी का धीरोदात्त वृति से सामना कर सकेंगे, और ऐसा करते समय आप के मन में उस के प्रति प्रेमभाव ही रहेगा । "

इसी प्रकार जब कलकत्ते में हम ने भारत के महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर से भेंट की तब गांधीजी की सर्व श्रेष्ठ कार्यसिद्धि के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त करते हुए वह बोले, "उन्होंने हमारे देशवासियों को निर्भय बनाकर द्वेष और दंभ से, जो कि एक साथ रहते हैं, मुक्त होने की शिक्षा दी है ।"

स्वजनों के प्रति गांधीजी के प्रेमभाव की कोई सीमा नहीं । किंतु यह प्रेम कदापि अंधा नहीं होता । जनता को स्वाधीनता-प्राप्ति के आंदोलन में युद्ध की अपेक्षा अधिक अच्छा मार्ग ग्रहण करने का अभ्यस्त बनाना ही अपना जीवनोद्देश्य है यह बात गांधीजी अनेक बार दुहरा चुके हैं । हिंद स्वराज्य अंतिम साध्य नहीं, अपितु, उसकी प्राप्ति के हेतु चलाया गया अहिंसक आंदोलन मानवीय इतिहास का एक अभिनव प्रयोग एवं युद्ध का अन्त करने की दिशा में उठाया गया एक कदम मात्र हैं ।

अहिंसक शक्ति नेपाल में

क्या नेपाल की धरती पर अहिंसक शक्ति का विकास नहीं हो सकता हैं ? क्या यहाँ की जनता अहिंसक शक्ति के आधार पर राष्ट्र में न्यायिक राजनैतिक परिवर्तन नहीं ला सकती ?

नेपाल की मिट्टी का कण कण आध्यात्मिक शक्ति से भरपुर है । नेपाल पुत्र बुद्ध के चरणों में ऊँगलीमाल का शरणागत होना क्या यह हिंसा पर अहिंसा का विजय नही हैं । नेपाल में विक्रम संबत २०४६ (ई.स. १९९०) में विना किसी हिंसात्मक आन्दोलन के बहुत बडा

राजनैतिक परिवर्तन आया। जनता को राजा से अधिकार प्राप्त हुआ - यो कहे प्रजातंत्र आया। २०४६ सालका परिवर्तन इस सत्य का द्योतक है कि इससे भी अधिक अधिकार जनता के हाथ आ सकती है, बिना किसी हिंसात्मक आन्दोलन के।

धर्म की धरती है - नेपाल। इसका कण-कण आध्यात्मिक शक्तियों से ओत-प्रोत है। इन आध्यात्मिक शक्तियों से नेपाली संकल्प के साथ महान आत्मबल और नैतिकबल प्राप्त करने की क्षमता रखता है। जिससे यह सफल सत्याग्रही बन सकता है। और अहिंसा के रास्ते से अपने सभी राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक मसले को न्यायोचित रूप में बदल सकने में सामर्थ्यवान जान पड़ता है।

गांधीजी के कुछ सम्बोधन

न्यूटाउन मस्जिद में भाषण

(दक्षिण अफ्रिका के जोहांसवर्ग में न्यूटाउन मस्जिद में गांधीजी के दिए गए भाषण का एक अंश)

देश तो कानून की मूल भावना में है। ईसा मसीह ने कहा हैं, भगवान को किसी ने नहीं देखा, क्यों कि वह अशरीरी तत्व है। उसी प्रकार इस कानून का अन्तर्निहित तत्व भी शब्दों से प्रकट नहीं किया जा सकता हैं। हर भारतीय इस तत्व का अनुभव करता हैं और अनुभव करने पर उससे उसी प्रकार दूर रहना चाहता है जिस प्रकार शैतान से। कानून समूचे भारतीय समाज के तिरस्कार पर आधारित है, और जनरल स्मट्स के यह कह देने से कि वे भारतियों के साथ उचित और न्यायपूर्ण वर्ताव करना चाहते हैं, तनिक भी अन्तर नहीं पड़ता। फैसला उनके कामों पर दिया जाना चाहिए, उनके शब्दों पर नहीं। हमारे देखने में यह आया है कि थोथी प्रतिष्ठा के कारण सरकार, जो कुछ हम स्वेच्छा से देना चाहते हैं उसे लेने को तैयार नहीं है और हमें गुलामों की तरह देने पर विवश करना चाहती है। व्यक्तिगत स्वतन्त्रता-सम्बन्धी मामलों में अनिवार्यता तभी लादी जा सकती है जब सम्बन्धित व्यक्ति गुलाम हो।

अगर आप यह सिद्ध कर दिखायें कि ज्यादातर भारतीय कानून को स्वीकार करने के बजाय जेल, अपमान, अपने माल-असबाब की जब्ती-यह सब सहन करने को तैयार हैं तो उस हालत में जनरल स्मट्स, चाहे उनके पास कोई जाये या न जाये, कहेंगे, "बेशक, ये ऐसे लोग हैं, जिन्हें मैं अपना नागरिक कहने में गर्व मानूंगा, जिन्हें मैं अपना समकक्ष सहनागरिक समझूंगा और जो राष्ट्र के काम के होंगे।" किन्तु यदि आप मोर्चे पर इस तरह न डटे तो जनरल स्मट्स बेशक यह भी कहेंगे,

"अच्छी बात है, १०,०००(दस हजार) भारतीय उपनिवेश में रहें, हम उन्हें कुत्तों की तरह रख सकते हैं और अपनी मौत मरने दे सकते हैं ।" किन्तु यदि उन्हें शानदार मृत्यु - मनुष्योचित मृत्यु पानी हैं तो उसके लिए उनके सामने एक ही मार्ग है । .... मेरा ख्याल है, यदि उपनिवेश को यह विश्वास हो जाये कि हम लोग सच्चे हैं, अपने उद्देश्य, देश, धर्म और आत्मसम्मान के लिए कष्ट सहने को तैयार हैं तो सारा उपनिवेश एक स्वर से जनरल स्मट्स से कहेगा कि आप को इन्हें देश से बाहर निकाल देने का अधिकार नहीं दिया गया हैं । ये भविष्य में कोई आव्रजन नहीं चाहतें जो समाज इस प्रकार का संघर्ष करने की क्षमता रखता हैं, वह गलत ढंग की होड़ में नहीं उतरेगा और ऐसे किसी भी कानून को मान लेगा जो सभी के भले के लिए बना हो , मुट्ठी भर दूकानदारो की भलाई के लिए हरगिज नहीं । यदि देश के सर्वसामान्य हित के लिए दूकानो का नियमन करना आवश्यक हो तो अपनी ओर से हमने असंख्य बार ऐसा करने को कहा है । ... ... (हर्ष ध्वनि)

'इंडियन ओपीनियन' १८/१/१९०८

दक्षिण अफ्रिका के भारतीयों को अंतिम संदेश

जोहांसवर्ग

१०/१/१९०८

स्वाभिमान एवं आत्मसम्मान की रक्षा के लिए हमें बड़े-से-बड़े त्याग करने को तत्पर रहना होगा । तभी हम अपने गौरव की रक्षा कर सकेंगे ।

जो भारतीय कैद में गये हैं, वे कैद में रहेंगे । यह समझ लेना चाहिए कि इस अर्से में ट्रांसवाल के भारतीय जो कुछ करेंगे उसी पर जीत निर्भर रहेगी । सरकार ने कुछ लोगों को कैद किया, यह बहुत अच्छा किया । पीछे रहनेवाले भारतीयों की अब पूरी तरह कसौटी होगी ।

कमजोर मुनष्य डरेंगे । ब्लॅकलेग -कलमुंहे तरह-तरह की बातें बनायेंगे । इस प्रकार की एक भी बात से डिगना नहीं चाहिए । अपने बहादुर भाईयों से मेरी विनती है कि वे शपथ को न भूलकर हिम्मत रखें ।

लड़ाई शुरू करते समय ही हमने सोच रखा था कि सब-कुछ खो देंगे, लेकिन खूनी कानून को मानकर स्वाभिमान नहीं गवायेंगे । अंग्रेजों में स्वाभिमान के लिए (देश के लिए) सब कुछ गवा देने के सैकडों उदाहरण मिलते हैं । इसी प्रकार हम भी करेंगे तभी मनुष्य बनेंगे - मनुष्य रहेंगे । ... ...

उस खुदाई लड़ाई में जिस तरह हिम्मत की जरुरत है उसी तरह सत्य की भी है । ... ...

याद रखना चाहिए कि बिना आवश्यक्ता के कोई सहायता न मांगे । और सहायता स्वरूप जो पैसा अथवा अनाज उनके हाथ में आये, उसका उपभोग अत्यंत प्रमाणिकता से करें ।

इस लड़ाई में हमारे सभी सद्गुणों की आजमाइश होगी । दुर्गुण जाहिर होकर सामने आ जायेंगे । ... ...

'इंडियन ओपीनियन' १८/१/१९०८

दक्षिण अफ्रीका के भारतीयों को पत्र

जोहांसवर्ग

१५.७. १९१४ के पूर्व

प्यारे भाई अथवा बहन,

मै दक्षिण अफ्रिका छोड़कर जा रहा हूँ । इस समय मेरा मन दो शब्द लिख जाने को चाहता है ।

इस देश में (अपने प्रति) भारतियो के प्रेम का मैं ने जो अनुभव किया है वह अगाध है । मेरा विश्वास है कि ऐसा प्रेम दिखाने वाली प्रजा सदैव, उन्नति करेगी । "हमारा समाज अकृतज्ञ है" मैं ऐसे शब्द सुनता हूँ । मेरा अन्तःकरण यह साक्षी देता है कि ये अज्ञानवश और उतावली में कहे हुए शब्द हैं ।

इस देश में भारतियो के शांति से रहने के सरल और उत्तम उपाय हैं । (अमुक) हिन्दू, मुसलमान, ईसाई और फारसी है) इस धर्मद्वेष को

भूल जाओ। बंगाली, मद्रासी, गुजराती, पंजाबी के प्रान्तीय भेद को नष्ट कर दो। ब्राह्मण, क्षत्रीय, वैश्य और शूद्र आदि वर्णों में विभाजित करनेवाले उंच-नीच के विचारों को त्याग दो। सब भारतियों को एक ही कानून का मुकाबिला करना है। उसके विरुद्ध हम अलग-अलग होकर कैसे लड़ सकते हैं ? यदि नेतागण स्वार्थी, लोभी, आलसी, झूठे और विषयभोगी हों तो जनता कभी भी उन्नति नहीं कर सकती। इसी प्रकार अगर जनता पिछड़ी हुई हो तो दोष उस में नेताओं का माना जायेगा और वे ही पाप के भागी भी होंगे।

हमलोग बहुत गन्दे हैं और पैसे के लोभ से इतनी नीचता का व्यवहार करते है कि गोरी प्रजा खीझ उठती है, इस में उनका दोष नहीं है। यदि नेतागण प्रयत्न करें तो जो गन्दगी देखने में आती है वह दूर हो सकती है।

'इडियन ओपीनियन' समाज की सेवा करने के लिए ही प्रकाशित किया जाता है। फिनिक्स संस्था भी इसी कारण चलाई जाती है। वहां जो लोग रहते हैं वे वहां धन कमाने के उद्देश्य से नहीं रहते। वे केवल उतना ही धन लेते हैं जिससे वे सादा और गरीबी का जीवन व्यतित कर सके। यदि समाज ने इन परिस्थितियों में काम करनेवाले लोगों की सेवाओं का फायदा नहीं उठाया तो वह धोखा खायेगा।

और अन्त में यह कहना चाहता हूँ कि समाज का छुटकारा उसके अपने हाथ है और उसका उपाय है, सत्याग्रह।

मेरी कामना है की मेंरे हाथों जाने-अनजाने यदि किसी भारतीय का अहित हुआ हो अथवा किसी को कष्ट मिला हो तो वह और भगवान मुझे क्षमा करें।

मैं सत्याग्रही तो हूँ ही और उम्मीद है कि रहूंगा भी, लेकिन गत दिसम्बर में मुझ पर 'गिरमिट' का विशेष प्रभाव पड़ा यहाँ तक कि मुझे गुजराती लोग 'गिरमिटिया' कहने लगे, इसलिए ....

मै हूँ
समाज का गिरमिटिया
मोहनदास करमचन्द गांधी

जनता और राष्ट्र की सेवा

" हाम्रो राजा हाम्रो देश प्राण भन्दा प्यारो छ"
(हमारा राजा, हमारा देश प्राण से भी प्यारा है।)

यदि जनता अपने प्राणो से भी प्रिय अपने राजा और अपने देश को मानती है, तब शायद राजा अपने प्राणो से प्रिय अपनी प्रजा और देश को ठानते होंगे। ऐसी कहानियां इतिहास मे मिलती है कि राजा रात्रि के समय भेष बदलकर प्रजा के दुख-सुख, तथा राज्य अधिकारी का प्रजा के प्रति न्याय-अन्याय का सही जायजा लेने का प्रयास करते थे। राजा प्रजा और देश हेतु अपना सर्वस्व बलिदान कर देते थे। अपने देश के लिए जानते जानते मौत को बलिदान के रुप में स्वीकार करनेवालों में भारतीय प्रधान मंत्री इंदिराजी हुई। समाज तथा राज्य के संचालन में न्याय का बहुत बडÞा महत्वपूर्ण स्थान बताया गया है। मुझे लगता है कि न्याय राष्ट्र सत्ता संचालन का प्राण हैं"।

राष्ट्र शासन तथा राष्ट्र अध्यक्ष के अनेकों रुप देखने में आते हैं। राजतंत्र, प्रजातंत्र, गणतंत्र, सैनिक शासन, राजा, राष्ट्रपति, तानाशाह इत्यादि। वास्तव में काल स्थान परिपेक्ष्य और जन-जीवन के अनुरुप इन पद्धतियों में बदलाव आता जान पडÞता है। सबका उद्देश्य है- मानव जीवन को बेहतर, सुखमय, समृद्धिपूर्ण और शांतिमय बनाना। वर्तमान समय में भी बहुत से विकसित पश्चिमी देशों में भी राजतंत्र हैं। देश विकसित है। जनता सुखी सम्पन्न है। ऐसा निश्चित है कि वहाँ के राजा और जनता में कुछ ऐसी खुबियाँ हैं, जो देश को विकसित किए और जनता को सुखी-समृद्धशाली बनाए। विकासशील देशो में ऐसे अनेक देश है जहाँ प्रजातंत्र है, गणतंत्र है फिर भी सैनिक शासन बार बार होता रहा है। क्या यह सत्य नहीं कि वहाँ के नेता में ऐसी कुछ खामियाँ होगी जो

सैनिक शासन को आमंत्रित की होगी ?

आज नेपाल अराजकता के दौर से गुजर रहा हैं । राजतंत्र के विरुद्ध नारेवाजी होते है, जुलुस निकलते है, गणतंत्र की मांग हो रही हैं । माओवादी-सरकार सम्झौता पूर्व, बहुत से पहाडÞी क्षेत्रो में उनका ही शासन था, बाहर से जानेवालोको वे प्रवेशाज्ञा (VISA) देते , जो उस क्षेत्र के लिए अधिकारिक पत्र होता तथा सुरक्षा के दृष्टिकोण से भी बहुत महत्वपूर्ण होता । साथ ही साथ मधेशी मुक्ति मोर्चा के बन्द आह्वान मधेशियो के हकहित के लिए एक सशक्त आवाज तथा कार्यक्रम के रुप में आते दीखते है ।

इतिहास साक्षी है नेपाल में राजसत्ता देश में अमन चैन लाना चाहती थी सैनिक बल के आधार पर । माओवादी सत्ता लेना चाहते थे बन्दूकी कारवाई के बल पर । राजनीतिक पार्टियां सत्ता संचालन करना चाहती थी वोट के बल पर । लेकिन देश और जनता की सेवा करना कौन चाहते है ? क्या वर्तमान स्थिति नेपाली नेताओं की अयोग्यता का प्रमाण नहीं हैं ?

आज आवश्यकता इस बात की है कि हर नेपाली - राजा, अधिकारी, नेता, सामान्यजन, व्यवसायी हर आदमी देश हित में कर्म करे । सेवा की आडÞ में शोषण, भलाई की आडÞ में बुराई, न्याय की आडÞ में अन्याय, धर्म की आडÞ में अधर्म, शान्ति की आडÞ में अशान्ति, जैसे कर्मो को छोडÞ । राष्ट्र हित में बोलना, पत्रों में लिखना परन्तु कर्म राष्ट्रहित में न करना" देश, जनता, ईश्वर तथा अपनी आत्मा के साथ धोखा है । और धोखा खुद को भी एक दिन धोखा दे जाता है । आइये, अब हम, देश हित-जनहित में किए अपने संकल्पों बचनों को धर्मसंगत कर्म रुप दें ।

जनता और देश की सेवा की दिशा में नेपाल के पडÞोसी देश तथा दक्षिण एशियालीं क्षेत्रीय सहयोग देशों के एक सदस्य, भुटान के नरेश ने अनुठा उदाहरण प्रस्तुत किया हैं ।

हिमालय की गोद में बसे ७६०० फुटकी उँचाई पर बसें, सात

लाख आवादी वाले, सुन्दर, समृद्ध नन्हें से राज्य के नरेश ने अपनी एकमेव अधिसत्ता खत्म करनेवाला संविधान का प्रारुप स्वीकार कर कीर्तिमान बनाया ।

भुटान नरेश की आस्था है कि 'संविधान ही देश का भाग्य विधाता होता हैं ।' सन् २००१ में लिखित संविधान की घोषणा कर जनता को एक बहुत अनुपम उपहार नरेश ने सौंपा । इस संविधान के प्रारुप को तैयार करने का निर्देश 'संविधान प्रारुप समिति के सदस्यों को देते वक्त कहा था, "संविधान मेरी ओर से जनता को उपहार के रुप मे नहीं देखा जाना चाहिए बल्कि संवैधानिक प्रक्रिया शुरु करना मेरा कर्तव्य है ।"

तत्कालिन भुटान के विदेश मंत्री जिग्मे वाई. थिन्ले ने कहा था "किसी नरेश द्वारा अपने ही महाभियोग की व्यवस्था करने का एक अनुठा उदाहरण हैं ।" क्योकि भुटान नरेश ने यह व्यवस्था भी की कि यदि असेंबली दो तिहाई बहुमत से प्रस्ताव पारित कर दे तो नरेश को भी गद्दी से हटाया जा सकता है ।

सात लाख आबादी वाले हिमाली राष्ट्र भूटान नरेश सकल घरेलु उत्पादन की बजाए सकल घरेलु खुशहाली को विकास का मापदंड मानते हैं । नरेश के विचार महायान बौद्ध धर्म से, जो १७ वी शताब्दी से ही भुटान का मार्गदर्शक है, से प्रभावित हैं । उनका मानना है कि यदि सिंगापुर ने लोकतंत्र के आडंबरों की बजाए इसकी आत्मा को अपनाकर प्रगति की है तो उनका भी देश पीछे नहीं रहेगा ।

(इंडिया टुडे, २५ दिसम्बर, २००२, "राजपाट जनता के हवाले" सुमित मित्र -पेज-५२-५३)

शोषितों के नाम

(शांति के लिए और आतंक तथा विध्वन्स से बचाव के लिए ।)

क्या आप शोषित हैं ?

क्या आपको अपमानपूर्ण जिन्दगी जीने के लिए विवश किया गया है ?

क्या आपके मानवीय अधिकारों को चालाक लोगों ने चालाकी से चुरा लिया है ?

क्या सत्ता, शक्ति से सम्पन्न लोगों ने आपके मानवीय अधिकारों को लुट लिया हैं ?

क्या आप इन बातों से अन्दर-अन्दर घुटते हैं और बदले की भावना से उबलते हैं ?

क्या आप अपने मान सम्मान और अधिकार की प्राप्ति हेतु अपने जान की बाजी लगा देने तथा अन्याय करनेवाले की जान लेने के लिए दृढ संकल्प किए है ?

तो आइए, सृष्टिकर्ता परमब्रह्म परमेश्वर और मानवता के नाम शांत मन, खुले दिमाग और विशाल हृदय से आपकी समस्याओं और इनके समाधान पर एक विहंगम दृष्टि डाले ।

शोषक और शोषित, शासित और शासक, सब तो हाड-मांस के बने है । सब के रगों में एक ही खुन बह रहा हैं और सब में एक अमर आत्मा विद्यमान है । सबके कर्मो का लेखाजोखा एक ही ईश्वर रखता जा रहा है ।

प्रायः सभी धर्मो के लोग, ईश्वर को मानने तथा न माननेवाले भी, आत्मा की अमरता, आत्मा की एकता और कर्मफल पर विश्वास करते

हैं । इन सब के बावजूद अलग अलग इन्सान के अन्दर अलग अलग विचार उठते हैं । जैसा विचार होता है वैसा कर्म । जैसा कर्म, वैसा कर्मफल ।

यदि आप चालाक, शक्तिसम्पन्न, अन्यायी लोगो के विचारो में परिवर्तन ला सके, इनकी सोच की दिशा को बदल सके तो इन समस्याओ का हल आसानी से निकल जायेगा । यह सूत्र चालाक राजनीतिज्ञों और बेरहम अफसरशाहों पर भी लागू होगा । उनके विचार और कर्म में परिवर्तन होंगे । वे भी एक मानव है । परिवर्तन तो मानवीय विचारों और कर्मो में होता ही रहता हैं ।

शासन पद्धति और शासक दोनो ही महत्वपूर्ण हैं । शासन पद्धति जो भी हो, शासक "कहने का शासक और कर्म का सेवक होना चाहिए" । ऐसे तो शासन पद्धति में प्रजातंत्र सबसे अच्छा माना जाता हैं परन्तु प्रजातंत्र में यदि शासक कहने का जनप्रतिनिधि और कर्म का जन शोषक हो तो देश और जनता के लिए इससे बड़ा दुर्भाग्य और क्या हो सकता है । देश का शासक ऐसा हो जिसके विचार जनता के विचार हो, जिसकी बोली जनता की आवाज हो, कर्म जनसेवक जैसा जनहित में, राष्ट्र हित में हो । ऐसा शासक तो देश और जनता के लिए बडा ही सौभाग्य है ।

दूसरे (अन्यायियों) के विचारो और कर्मो की दिशा बदलने की कीमत आपको चुकानी पड़ेगी । कीमत चुकाने के अनेक ढंग हैं । परन्तु, इसके लिए पहली शर्त है कीमत चुकाने की योग्यता हासिल करना । यह योग्यता है सर्व प्रथम निर्भय हो जाना । पूर्णतः भय रहित होना । जान, धन, सम्मान के हानि के भय से निर्भय हो जाना ।

निर्भय हो जाओ

निर्भय हो जाओ
दूसरे को भी निर्भय बनाओ ।

हम सब साथ प्राप्त करेगे - अधिकार, सम्मान, शांति और विकास ।

निर्भय होने का यह अर्थ कदापि नहीं :
- देश के नियमों को तोड़ना (आदर न करना)
- दूसरों को दबाना (दुःख देना)

निर्भय होने का अर्थ है - सत्य, पूर्ण सत्य, सिर्फ सत्य करना, अन्याय का सहन न करना, न्याय को साहस के साथ स्थापित करना ।

गांधी निर्भय थे
उन्होने भारतवासीयों को निर्भय बनाया,
अंग्रेजों की लाठी सहे, गोलीयो के सामने खडे रहें ।
अहिंसा और सत्याग्रह के रास्ते भारत को स्वतंत्र कराए ।

कृष्ण निर्भय थे,
उन्होंने पाण्डवों को निर्भय बनाया ।

शांतिपूर्ण न्यायिक समझौता न होने पर,
कौरवों को दण्ड दिया और पाण्डवों के लिए न्याय स्थापित किया ।
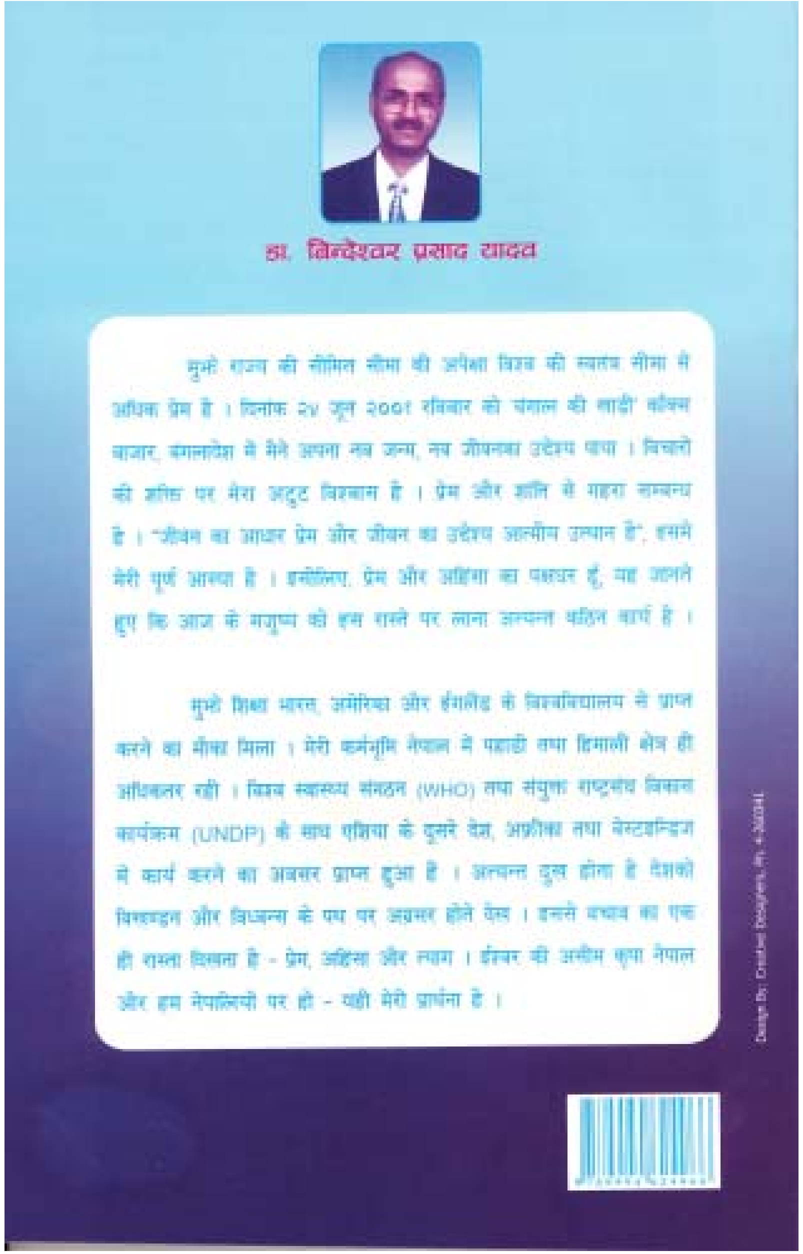
यह निर्भयता ही है,
जिससे पाण्डवो को अधिकार और सम्मान तथा हस्तिनापुर को शांति और विकास प्राप्त हुआ ।